Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2017-19
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th December 2018
Date of posting 15th & 20th December 2018

दिसम्बर 2018 वर्ष 30 अंक 12 मूल्य ₹ 40

# इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

डोना स्ट्रिकलैण्ड

गेरार्ड मौरौ

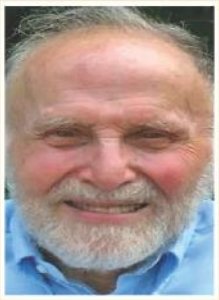

आर्थर एश्किन

## प्रकाश से बने औजारों के अविष्कारकों को

# भौतिकी का नोबेल

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
दिसम्बर 2018
वर्ष 30
अंक 12

# इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

**सलाहकार मण्डल**

शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे, डॉ. अशोक कुमार ग्वाल, डॉ. आर.एन.यादव, डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव, प्रो. राकेश कुमार पाण्डेय, प्रो. अमिताभ सक्सेना

**संपादक**

संतोष चौबे

**कार्यकारी संपादक**

विनीता चौबे

**उप-संपादक**

पुष्पा असिवाल

**सह-संपादक**

मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

**संस्थागत सहयोग**

गौरव शुक्ला, डॉ. डी.एस.राघव, डॉ. विजय सिंह, डॉ. सीतेश सिन्हा, रवि चतुर्वेदी, डॉ. मुनीष गोविंद, डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

**राज्य प्रसार समन्वयक**

शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर, राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, ए.के.सिंह, निशांत श्रीवास्तव, रजत चतुर्वेदी, एम. किरण कुमार, बिनीस कुमार, कुमार अभिषेक, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, अजीत चतुर्वेदी, अमिताभ गांगुली, नरेन्द्र कुमार

**क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक**

राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद, आर.के. भारद्वाज, प्रवीण तिवारी, अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, मनीष खरे, कुम्भलाल यादव, सचिन जैन, रूपेश देवांगन, राहुल चतुर्वेदी, नीरज नागर, संतोष उपाध्याय, असीम सरकार

**समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन**

राजेश पंडा

**आवरण एवं डिजाइन**

वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

विज्ञान लोकप्रियकरण में लगी संस्थाओं को हिन्दी में ज्यादा से ज्यादा प्रेरणाप्रद कार्यक्रम करने चाहिए। दूसरी भाषाओं से हिंदी में विज्ञान लेखन-अनुवाद की चुनौतियों को दूर करने के गंभीर व स्थायी प्रयास करने होंगे।

– प्रो.यश पाल

# इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 293

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका


## क्रम

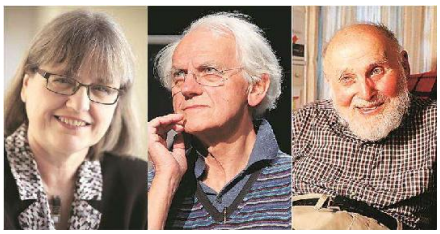

### विशेष

प्रकाश से बने औजारों के अविष्कारकों को भौतिकी का नोबेल

● डॉ.कपूरमल जैन/05

### शृंखला आलेख

पोखरण अध्याय के अप्रतिम परमाणु विज्ञानी डॉ.पी.के. आयंगर

● शुकदेव प्रसाद/11

### विज्ञान आलेख

भारत का मानवयुक्त स्पेस मिशन गगनयान

● डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र/14

पीएसएलवी-सी42 द्वारा ब्रिटेन के दो उपग्रहों का प्रमोचन

● कालीशंकर/17

अब क्या कर रहा है भारत का मंगलयान?

शशांक द्विवेदी/19

हिमालय भी खतरे में

● विज़न कुमार पांडेय/21

### एंटीबायोटिक दवाओं की हीरक जयंती

75 वर्ष की हुई एंटीबॉयोटिक दवाएं

● प्रमोद भार्गव/25

मिट्टी के स्वास्थ्य से जुड़ा हमारा स्वास्थ्य

● सुभाषचंद्र लखेड़ा/27

पर्यावरण शिक्षा और विकास

● डॉ.मनीष मोहन गोरे/33

### विज्ञान कथा

मुर्गीखाना

डॉ.रेखा कस्तवार/36

### कॅरियर

डेयरी टेक्नॉलॉजी

● संजय गोस्वामी/39

### विज्ञान इस माह

कमजोर हो रहा है बहुरूपिया वायरस

● इरफान ह्यूमन/43

### संस्थागत समाचार

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल,
सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, बिलासपुर/48

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-2700466 (डेस्क), 2700400 (रिसेप्शन)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

## प्रकाश से बने औजारों के अविष्कारकों को

# भौतिकी का नोबेल

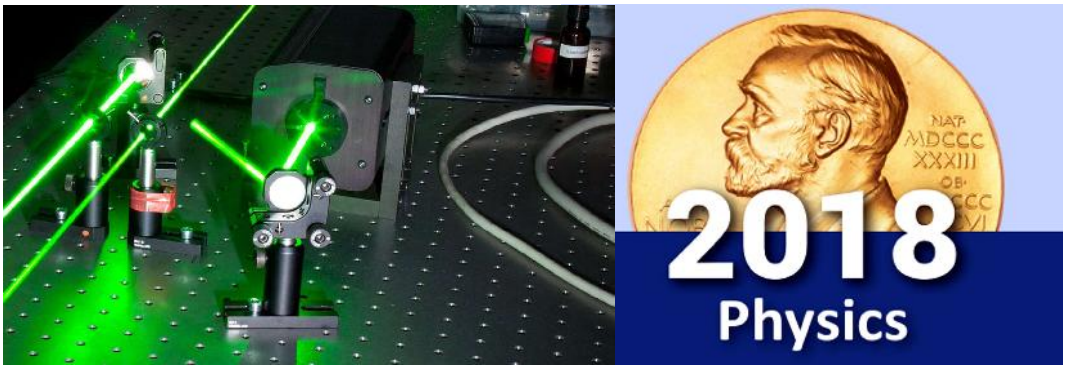


*सूक्ष्म-दुनिया के बारे में बेहतर तरीके से जानने तथा इच्छित तरीकों से बदलाव लाने में समर्थ 'प्रकाश से बने औजारों' के आविष्कारकों, आर्थर एश्किन (Arthur Ashkin), गेरार्ड मौरौ (Gerard Mourou) तथा डोना स्ट्रिकलैण्ड (Donna Strickland), को इस वर्ष के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार हेतु चुना गया है। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित इन वैज्ञानिकों द्वारा की गयी खोजों ने कई ऐसे नये-नये उपकरणों के आविष्कारों के लिए रास्ता बनाया है, जिनके बारे में आज से 35-40 साल पहले सोचना भी सम्भव नहीं था।*

डॉ. कपूरमल जैन

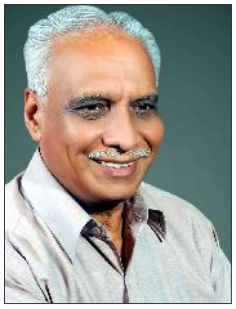

*डॉ. कपूरमल जैन वरिष्ठ विज्ञान लेखक हैं। भौतिकी शास्त्र से संबंधित लेख लिखने में वे सिद्धहस्त हैं। घर-घर में विज्ञान जैसी लोकप्रिय शृंखला भी उन्होंने लिखी है। आण्विक भौतिकी के क्षेत्र में उन्होंने शोधकार्य किया है। अब तक 225 से अधिक लेख तथा 15 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं। डॉ. कपूरमल जैन की लोक व्यापीकरण एवं विज्ञान की शिक्षण पद्धति में नवाचार लाने में गहरी रुचि है। वे भोपाल में निवास करते हैं तथा इस दिशा में कई वर्षों से कार्य कर रहें हैं।*

इस वर्ष 2018 के लिए 'भौतिकी' के नोबेल पुरस्कार का चयन तीन मायनों में महत्त्वपूर्ण है। पहले इस मायने में कि यह पुरस्कार 96 वर्षीय अमरीका के वैज्ञानिक आर्थर एश्किन को मिला जिन्होंने विज्ञान-कथाओं में 'प्रकाश के दाब' से वस्तुओं को चलाने की कथाकारों की कल्पना को साकार कर के दिखाया है; दूसरे इस मायने में कि नोबेल पुरस्कार में वाटरलू विश्वविद्यालय केनेडा के एसोशिएट प्रोफेसर भौतिक विज्ञानी डोना स्ट्रिकलैण्ड शामिल हैं, जो 116 सालों के इतिहास में 111 नोबेल पुरस्कार विजेताओं में तीसरी महिला हैं (उनके पहले 1963 में मारिया मेयर को 'नाभिकीय संरचना' की खोज के लिए तथा 1903 में मैरी क्यूरी को उनके पति पियरे के साथ 'रेडियोएक्टिविटी' की खोज के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था); और तीसरे इस मायने में कि इसने प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान 1915 में अलबर्ट आईंस्टीन द्वारा गढ़ी गयी 'लेसर' की संकल्पना के मूर्त रूप लेने के बाद इसके चमत्कारिक अनुप्रयोगों के मानव-हित में लगातार मिल रहे योगदानों को फिर एक बार सम्मानित करा दिया। आर्थर एश्किन तथा डोना स्ट्रिकलैण्ड के साथ इस पुरस्कार को शेयर करने वाले तीसरे वैज्ञानिक फ्रांस के गेरार्ड मौरौ हैं, जो डोना स्ट्रिकलैण्ड के शोध निर्देशक रहे हैं तथा वर्तमान में 'सेंटर फॉर अल्ट्रा-फास्ट ऑप्टिकल साइंस' के निदेशक हैं। 'नोबेल पुरस्कार समिति' की घोषणा के अनुसार पुरस्कार राशि का आधा भाग एश्किन को तथा शेष भाग दोनों में बराबर-बराबर बाँटा गया है। ज्ञातव्य हो कि यह पुरस्कार अल्फ्रेड नोबेल की याद में रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंसेस, दी स्वीडिश एकेडमी, दी कारोलिंस्का इंस्टीट्यूट तथा दी नार्वेजियन नोबेल कमेटी द्वारा भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, साहित्य, अर्थशास्त्र तथा शांति के क्षेत्रों में मानव-हित में किये गये उल्लेखनीय कार्यों के लिए सिर्फ जीवित वैज्ञानिकों ही दिया जाता है।

अगर हम इन वैज्ञानिकों के कार्यों को देखें तो पाते हैं कि इस वर्ष का नोबेल पुरस्कार एक चिमटी के रूप में लेसर को इस्तेमाल करने की क्षमता को विकसित करने के लिए एश्किन को तथा लेसर की अत्यंत छोटी तथा शक्तिशाली (पॉवरफुल) पल्सेस (स्पंदनों) को प्राप्त करने की तकनीक को खोजने लिए मौरौ तथा स्ट्रिकलैण्ड को दिया गया है। ये दोनों ही क्रांतिकारी खोजें अस्सी की दशक में हुई थी।

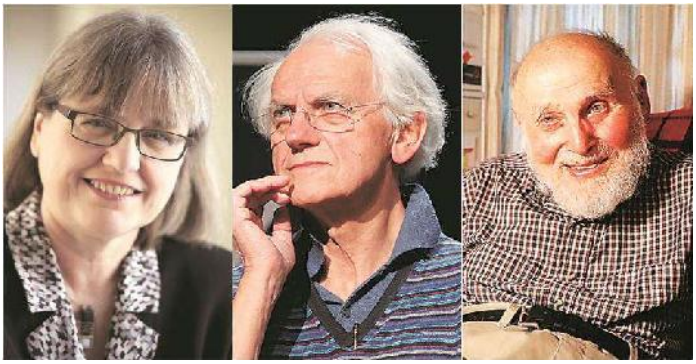

डोना स्ट्रिकलैण्ड  गेरार्ड मौरौ  आर्थर एश्किन

## पृष्ठभूमिः लेसर की संकल्पना

1915 में अलबर्ट आईंस्टीन का ध्यान किसी निकाय में उपस्थित परमाणुओं की प्रकृति पर गया। बाह्य-स्रोत की उपस्थिति में अवशोषण तथा उत्सर्जन की घटनाएं घटती रहती हैं। अवशोषण के दौरान परमाणु अपनी मूल-अवस्था (Ground State) से उत्तेजित-अवस्था (Excited State) में चला जाता है और उत्सर्जन के दौरान परमाणु उत्तेजित-अवस्था से अपनी मूल-अवस्था में लौट आता है। अतः निकाय में दो प्रकार के परमाणु मिलते हैं, जिनमें एक तो 'मूल-अवस्था' में रहने वाले तथा दूसरे 'उत्तेजित-अवस्था' में रहने वाले। सामान्यतः उत्तेजित अवस्था में परमाणुओं का जीवन-काल अत्यंत कम होता है।

अब अगर जीवन-काल पर विचार करें तो निकाय में मूल-अवस्था में मिलने वाले परमाणुओं की आबादी बहुत अधिक तथा उत्तेजित-अवस्था में मिलने वाले परमाणुओं की 'आबादी' अत्यंत कम मिलेगी, क्योंकि उत्तेजित परमाणु अपने अल्प जीवन-काल, कुछ नैनो-सेकण्ड, होने के कारण स्वतः उत्सर्जित' होते हुए ये अपनी 'मूल अवस्था' में लौट आते हैं। लेकिन, कब कौनसा 'उत्तेजित परमाणु' उत्सर्जित होगा, इस बारे में निश्चिततापूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता। अतः स्वतः उत्सर्जित होने की इस प्रक्रिया के दौरान मिलने वाले फोटॉनों में कोई तालमेल नहीं होता है और इनका 'समग्र प्रभाव' भी कम होता है।

तर्क को आगे बढ़ाते हुए आईंस्टीन ने विचार किया कि 'स्वतः उत्सर्जन' की प्रक्रिया को सम्पन्न होने में कुछ 'नैनो-सेकण्ड' की बजाय अगर 'माइक्रो-सेकण्ड' या इससे भी अधिक समय लगता हो तो अवशोषण की प्रक्रिया अधिकतर परमाणुओं को उत्तेजित अवस्था में तो पहुँचा सकती है लेकिन, स्वतः उत्सर्जन की प्रक्रिया के विलंबित होने के कारण 'उत्तेजित परमाणुओं' की संख्या में लगातार बढ़ोतरी होती चली जाएगी। ऐसे निकायों में सामान्य निकायों की तुलना में मिलने वाली परमाणुओं की आबादी उलट सकती है। अब अगर किसी 'बाह्य प्रकाश-स्रोत' की उपस्थिति में 'उलट-आबादी' (Invert-population) की यह स्थिति बनी रहती है तो हमें एक विशिष्ट प्रकार का उत्सर्जन मिल सकता है, जिसे हम 'प्रेरित-उत्सर्जन' (Stimulated emission) कहते हैं। 'प्रेरित-उत्सर्जन' के लिए, निकाय में स्वतः उत्सर्जित एक फोटॉन की आवश्यकता होती है। जब यह फोटॉन किसी निकाय में उपस्थित 'उत्तेजित परमाणुओं' में से किसी 'एक' से टकराता है तो वह परमाणु अपनी 'मूल-अवस्था' में लौटते हुए, ऊर्जा और संवेग संरक्षण के नियमों का पालन करते हुए, टकराने वाले फोटॉन की 'प्रतिलिपि' तैयार कर निकाय में छोड़ देता है। इससे निकाय में एक समान गुणधर्म वाले दो फोटॉन मिल जाते हैं। ये दो फोटॉन अन्य दो से टकराते हुए फिर दो और उत्तेजित परमाणुओं से टकरा कर अपने ही समान दो और प्रतिलिपियाँ तैयार कर लेते हैं। फिर ये चार फोटॉन आठ और आठ फोटॉन सोलह.... पहले जैसे फोटॉन की प्रतिलिपियाँ तैयार करने लगते हैं। दूसरे शब्दों में, इस निकाय से एक-समान गुणधर्मों वाले फोटॉनों से बना प्रकाश मिलने लगता है। इस प्रकाश में सभी फोटॉनों की न सिर्फ 'ऊर्जा', बल्कि 'संवेग' भी समान होते हैं। ऊर्जा की समानता से इन फोटॉनों को 'एकवर्णता' तथा संवेग की समानता से 'दिशात्मकता' मिलती है। यह इन्हें स्वतः उत्सर्जित फोटॉनों से बने प्रकाश से अलग बनाता है। अतः प्रेरित उत्सर्जित होने की इस प्रक्रिया के दौरान मिलने वाले फोटॉनों में जबर्दस्त तालमेल होता है और इनका 'समग्र प्रभाव' भी बहुत अधिक होता है। अब अगर एक ऐसी व्यवस्था कर ली जाए कि किसी निकाय में यह उलट-आबादी (Inverse population) यानि, उत्तेजित अवस्था में रहने वाले परमाणुओं की संख्या बनी रहे तो उपर्युक्त वर्णित प्रेरित उत्सर्जन को लगातार प्राप्त किया जा सकता है। अतः 'उलट-पापुलेशन' में बने रहने की क्षमता रखने वाले निकाय में अगर यह 'प्रेरित उत्सर्जित प्रकाश' दो 'समांतर दर्पणों' के बीच परावर्तित होता रहे तो धीरे-धीरे यह आवर्धित होने लगता है। अब अगर इन दर्पणों में से कोई एक अल्प-पारदर्शी हो तो उसमें से कुछ प्रकाश बाहर निकालते हुए निकाय को एक विशिष्ट प्रकार के शक्तिशाली ऊर्जा-स्रोत 'लेसर' (Light Amplification by Stimulated Emission of Radiation) में बदल देता है।

## 'लेसर' का आविष्कार

'लेसर' के आविष्कार के पीछे किसी एक व्यक्ति का ही हाथ नहीं है। आईंस्टीन की कल्पना-शक्ति के आधार पर इसके सैद्धांतिक स्तर पर आगमन की सूचना तो 1915 में ही मिल चुकी थी। लेकिन, तकनीकी दिक्कतों पर निजात पाने में कई वर्षों का समय गुजर गया। 1953 में 'लेसर' के पहले 'मेसर' (Microwave Amplification by Stimulated Emission of Radiation) आया। 'मेसर' के आविष्कारक चार्ल्स टाउंस (Charles Townes) थे, जिन्हें 1964 में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। फिर, करीब सात वर्षों के अंतराल के बाद 'रूबी लेसर' (Rubi Laser) का आविष्कार हुआ, जिसके आविष्कारक थ्योडोर मैमन (Theodore Maiman) थे, जो केलीफोर्निया के मालिबु (Malibu) शहर में स्थित 'ह्यूज रिसर्च लैबोरेटोरी' (Hughes Research Laboratory) में ग्रेजुएट विद्यार्थी थे।

## 'रूबी लेसर' Rubi Laser

इस तरह परमाणु या अणुओं द्वारा अवशोषण व उत्सर्जन की 'गहरी समझ और देखने की नवाचारी दृष्टि' ने एक छोटे से प्रेरित उत्सर्जन के 'विचार' को जन्म दिया, जिसके 'लेसर' के रूप में मूर्तरूप लेने से बड़ी क्रांति हो गई। आज भी जो बात हैरत में डालती है वह यह कि इतने वर्षों के बाद भी 'लेसर' अनुप्रयोगों के मामले में उतना ही नया और रहस्यमय है, जितना अपने आविष्कार के दिनों में रहा था। उन दिनों लोग अक्सर कहते थे कि यह 'चाबी' है और हमें 'ताले' खोजने हैं ताकि, इसका इस्तेमाल हो सके। आज यह वैज्ञानिक अनुसंधानों का महत्त्वपूर्ण 'औजार'

बन चुका है और इसके हजारों व्यावसायिक उपयोग सामने आ चुके हैं। यह सब इसके उच्च-शक्ति के स्रोत बनने की और एक बिंदु के रूप में फोकसित होने की जर्बदस्त क्षमता का नतीजा है। आज यह जीवन के लिए अपरिहार्य प्रतीत होने लगा है।

रूबा लजर

## लेसर : कई प्रकार

एक बार सिद्धांत समझने और तकनीकी समस्याओं से निजात पाने के तरीकों को जानने के बाद कई तरह के लेसर बन कर सामने आने लगे। पहले आये 'रूबी लेसर' और 'हीलियम-नियान लेसर' के बाद 'कार्बनडायआक्साइड लेसर' आया जिसने इसके औद्योगिक अनुप्रयोगों का रास्ता खोला। इस लेसर के आविष्कारक भारत में जन्में चंद्रकुमार नरन भाई पटेल थे। इसके साथ ही 'सेमीकंडक्टर लेसर डायोड' भी आया, जिसने आगे चल कर 'संचार प्रौद्योगिकी' में अपनी अहम् भूमिका निबाही। आज 'अवरक्त' से लगा कर 'पराबैंगनी' विकिरणों तक की रैंज में लेसर मौजूद हैं। आरंभिक लेसर 'एकवर्णी' (Monochromatic) प्रकाश के स्रोत थे। लेकिन, शीघ्र ही 'ट्यूनेबल डाई लेसर' का आविष्कार हो गया। इनके आने से रसायनज्ञों और जीवशास्त्रियों को अत्यंत कम मात्रा में उपलब्ध पदार्थों के अध्ययन में सुविधा हो गई। 'लेसर' के आने से सी.वी. रमन की खोज के अनुप्रयोग का दायरा भी बहुत व्यापक हो गया।

## `लेसर' की उपस्थिति, हर जगह

'लेसर' ने हमारे दैनिक जीवन में अपनी जबर्दस्त उपस्थिति दर्ज कराई है। आज बाजार में ऐसे कई उत्पाद (प्रॉडक्ट) उपलब्ध हैं, जिनमें 'लेसर' का उपयोग होता है। चाहे वे खिलौने हों या कंप्यूटर या प्रिंटर, दंत चिकित्सकों के ड्रिलर हों या वर्कशॉप में प्रयुक्त होने वाली मेटल-कटिंग मशीन, सब जगह 'लेसर' काम आ रहे हैं। 'नेत्र-सर्जरी' में 'लेसर' के उपयोग होने से चिकित्सा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन सामने आने लगे हैं। शरीर से या चेहरे से अनचाहे बालों को हटाने में और शरीर के किसी भाग में 'टेटू' गुदवाने में पारंपरिक तकनीकों को 'लेसर' आधारित तकनीकों ने बदल दिया है। इस तरह 'लेसर' के दिन प्रतिदिन नित-नए उपयोग सामने आते जा रहे हैं। आज ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है, जहाँ 'लेसर' ने अपनी उपस्थिति दर्ज करा कर चौंकाया नहीं है। 'लेसर प्रौद्योगिकी' नये-नये आइडिया को पैदा कर रही है, जिससे इसके अनुप्रयोगों की सूची तेजी से बढ़ती जा रही है। आज यह 'नाभिकीय संलयन' (Nuclear fusion) में, पदार्थ को ठंडा कर उसकी बीईसी (Bose Einstein Condensate) अवस्था प्राप्त करने में, क्वांटम कम्प्यूटर के निर्माण में, हीरे-जवाहरात व बैंकों आदि की सुरक्षा के लिए घुसपेठियों पर नजर रखने में, 'लेसर गाइडेड तारों' के निर्माण में, चिकित्सा के क्षेत्र में, त्रि-विमीय फोटोग्राफी में, सूचना प्रौद्योगिकी में, फोटो लिथोग्राफी में, वस्तुओं की पहचान हेतु अदृश्य निशानों को उकेरने में, कटर के रूप में, प्रकाशीय चिमटी के रूप में, टिश्यू-टोमोग्राफी में, युद्ध के मोर्चों पर 'लेसर' आधारित प्रतिरक्षा प्रणालियों को विकसित करने में, अतिद्रुत-गति फोटोग्राफी आदि में प्रयुक्त होने लगा है।

## एश्किन की `प्रकाश-दाब' में रूचि

एश्किन लेसर भौतिकी पर 1960 के बाद से ही काम कर रहे थे, जब लेसर का आविष्कार हुआ था। प्रकाश से उन वस्तुओं पर दाब लगता है, जिसपर इसे आपतित किया जाता है। इसकी जानकारी वैज्ञानिकों को बहुत पहले से ही थी। 16वीं शताब्दी में कैप्लर ने पुच्छलतारों की पूँछ के कारणों में इस दाब की चर्चा की थी। इसके बाद उन्नीसवीं शताब्दी में मैक्सवेल ने अपने प्रकाश के 'विद्युतचुम्बकीय सिद्धांत' में इसके बारे में सैद्धांतिक गणना कर इसके उद्गम के बारे में कहा था। लेकिन, मोमबत्ती अथवा तापदीप्त फिलामेंट लैम्प से मिलने वाले 'साधारण प्रकाश' से यह दाब मापनयोग्य प्रभावी स्तर पर नहीं मिल पाता है। हालांकि, लेसर जैसे विशिष्ट प्रकाश स्रोत की खोज के बाद इसके मापनयोग्य सीमा में पाये जाने की संभावना जागी तथा एश्किन ने इस दिशा में गंभीरता से सोचना आरंभ किया। एश्किन जब उन्नीस सौ साठ की दशक में 'बेल लेब' में कार्य कर रहे थे, तभी उनके मन में 'नॉनलीनियर ऑप्टिक्स' तथा 'लेसर ट्रेपिंग' के क्षेत्र में रूचि जागी थी। वे लेसर की सहायता से 'प्रकाशीय चिमटी' (Light Tweezer) का निर्माण करना चाहते थे।

इस क्षेत्र में काम करने में कई चुनौतियाँ थीं। इनमें सबसे बड़ी चुनौती 'प्रकाशीय चिमटी' की पकड़ में अणु-परमाणुओं को लाने के लिए बहुत शक्तिशाली 'बल' को पाने की थी। इसके लिए इन कणों की 'ऊष्मीय गतियों' को नियंत्रित कर रोकने के तरीकों और तकनीकों को खोजने की आवश्यकता थी। इतना ही नहीं, 'लेसर' की सहायता से अणु-परमाणुओं को पकड़ने के लिए इन्हें एक बिंदु से भी कम स्थान पर लाने की कठिन समस्या भी सामने थी। एश्किन ने 'प्रकाशीय चिमटी' का आविष्कार कर परमाणुओं को रोकने तथा 'ट्रेप' करने के लिए अन्य तकनीकों को जोड़ कर एक व्यवस्था कर सबको चकित कर दिया। 'ऊष्मागतिकी' के अनुसार परमाणुओं की गति को कम करने का मतलब उन्हें ठंडा करना भी है। अतः एश्किन के आइडिया से 'लेसर कूलिंग' का एक नया क्षेत्र उभर कर सामने आ गया। आगे चल कर 'लेसर' के अनुप्रयोग से परमाणुओं की गति को नियंत्रित करने में वैज्ञानिकों को भारी सफलता मिली और वे एक माइक्रो-केल्विन के दसवें भाग से भी कम ताप पाने में सफल हो गये। इस ताप पर वैज्ञानिकों को पदार्थ की नयी अवस्था 'बी.सी.एस.(Bose-Einstein Condensate)' मिली, जिसके अत्यंत निम्न-ताप पर अस्तित्व में होने की भविष्यवाणी सत्येननाथ बोस तथा अलबर्ट आईंस्टीन ने 1924 में सैद्धांतिक आधार पर की थी। 'बी.सी. एस. अवस्था' की खोज करने वाले वैज्ञानिकों में एश्किन के एक साथी स्टीवन चू (Steven Chu) भी शामिल थे, जिन्हें क्लाउड कोहन-टनौजी (Claude Cohen-Tannoudji) तथा विलियम डी. फिलिप्स (William D. Phillips) के साथ 1997 के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उस समय एश्किन इस पुरस्कार के लिए सर्वथा योग्य होने के बावजूद छूट गये। एश्किन का लक्ष्य 'प्रकाशीय चिमटी' तथा 'ट्रेप' के आविष्कार का था। अतः वे आरंभिक सफलता के बाद इस दिशा में लगातार काम करते रहे। वे जानते थे कि प्रकाश की सहायता से किसी पिण्ड पर 'बल' लगाया जा सकता है। हालांकि, उनके ध्यान में यह बात

थी कि प्रकाश के कारण उत्पन्न बल 'पीको-न्यूटन' की कोटि का होता है। अतः इससे अत्यंत छोटे आकार के पिण्डों को ही प्रभावित किया जा सकता है। भौतिकी से मिली इस समझ के बाद एश्किन ने नये प्रयोगों को करने की रूपरेखा बना कर काम करना आरंभ किया। उन्होंने देखा कि जब लेसर पुंज (बीम) को फोकस किया जाता है, तब इसके केंद्र में बहुत उच्च-तीव्रता वाला 'विद्युत क्षेत्र' होता है, लेकिन बाहर की ओर कम-तीव्रता वाला क्षेत्र होता है। इसतरह इसमें विद्युत-क्षेत्र के शक्तिशाली 'ग्रेडियंट' की उपस्थिति से एक 'बल' तैयार हो जाता है, जो परावैद्युत पदार्थ से बने पिण्डों (जिन पर विद्युत क्षेत्र की उपस्थिति में 'प्रेरित विद्युत द्विध्रुव' (Indused electric dipole) उपस्थित हो जाता है) के लिए 'आकर्षण' या 'विकर्षण' का कारण बनता है। शीघ्र ही एश्किन यह प्रदर्शित करने में कामयाब हो गये कि छोटे-छोटे माइक्रोमीटर आकार के पिण्डों को 'लेसर पुंज' के केंद्र की ओर धकेला जा सकता है, जहाँ फोटॉनों का घनत्त्व पुंज के अन्य भागों की तुलना में अधिकतम होता है।

अपने नये प्रयोगों में उन्होंने 'लेसर' की सहायता से छोटे पारदर्शी गोलों को गतिमान किया तथा उन्हें अपने सैद्धांतिक आकलन के अनुसार गति करते हुए पाया। इसतरह उन्होंने 'प्रकाश के दाब' के प्रभाव को प्रदर्शित करने में सफलता प्राप्त की। एश्किन 'लेसर पुंज' की सहायता से गुरूत्वाकर्षण के विरूद्ध गोलों को उठाने में भी सफल हो गये।

एश्किन ने अपने प्रयोगों को आगे बढ़ाया और शीघ्र ही वे जैव-निकायों के अध्ययन के लिए 'लेसर' को एक नये औजार के रूप में स्थापित करने में सफल हो गये। विभिन्न प्रकार के लेंसों का उपयोग कर वे न सिर्फ इस पिण्डों की गति को नियंत्रित करने में कामयाब हो गये, वरन् वे एक ऐसा 'ट्रेप' भी निर्मित करने में सफल हो गये जहाँ इच्छित पिण्डों को अध्ययन हेतु रखा जा सकता था।

काम करते-करते अचानक उन्होंने देखा कि वे लेसर की सहायता से बैक्टीरिया तथा विषाणुओं को भी ट्रेप कर सकते हैं। अपने आरंभिक शोध परिणामों के मिलने के बाद जब एश्किन ने अपने साथी वैज्ञानिकों से कहा कि 'मैं प्रकाश की सहायता से जीव-कोशिकाओं को पकड़ सकता हूँ', तब लोगों ने उनसे कहा कि अपनी बात को इतना बढ़ा-चढ़ा कर मत कहो कि वह अविश्वसनीय लगे। लेकिन, उन्होंने कपोल कल्पना लग रहे इस विचार को मूर्त रूप दे कर सबको हतप्रभ कर दिया।

अपने प्रयोगों में एश्किन ने 'हरे प्रकाश के लेसर' का इस्तेमाल किया और माइक्रोस्कोप की सहायता से देखा कि 'बेक्टीरिया' ट्रेप तो हुए हैं, लेकिन लेसर बीम के पास आते ही मर गये हैं। इससे उन्हें कम ऊर्जा वाले फोटॉन पुंज की आवश्यकता महसूस हुई ताकि उन्हें जीवित अवस्था में ट्रेप कर के रखा जा सके। इसके लिए उन्होंने अपने हरे प्रकाश वाले लेसर के स्थान पर 'अवरक्त लेसर' को प्रयुक्त किया। उन्होंने देखा कि यह बदलाव उनकी आशा के अनुरूप रहा। अवरक्त लेसर पुंज की उपस्थिति से उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचा और वे जीवित बने रहे जिससे उनका अध्ययन संभव हो सकता था। इसके बाद अपने प्रयोगों को जारी रखते हुए वे यह भी प्रदर्शित करने में सफल हो ये कि बिना जीव-कोशिका की मेम्ब्रन (झिल्ली) को क्षति पहुँचाये, जीव-कोशिका के अंदर भी प्रवेश

करना और उनमें बदलाव करना संभव है।

एक प्रयोग के दौरान यूकेरियोटिक कोशिकाओं (Eukaryotic cells) में पाये जाने वाला 'मोटर प्रोटीन काइनेसिन' (Motor protein Kinesin) प्रकाशीय चिमटी में ट्रेप किये गये परावैद्युत गोले से सम्बद्ध होने के बाद कोशिका के ढ़ांचे (Skeleton) पर चलते हुए तथा अपने साथ गोले को खींचते हुए देखा गया। इससे 'काइनेसिन प्रोटीन' अणु की गति को मापना संभव हो गया। प्रयोग के दौरान एक स्थिति ऐसी भी आयी जब ट्रेप में 'लेसर पुंज' के केंद्र की ओर लगने वाले बल को यह अणु सह नहीं पाया, जिससे गोले को पुनः केंद्र की ओर खिसकते हुए देखा गया।

इस तरह एश्किन अपने प्रयोगों के आधार पर यह स्थापित करने में सफल हो गये कि 'लेसर' का एक चिमटी के रूप में इस्तेमाल कर बेक्टीरिया, विषाणुओं, जीव कोशिकाओं, डी.एन.ए. के टुकड़ों और धातु के कणों आदि जैसी सूक्ष्म वस्तुओं को बिना नुकसान पहुँचाये पकड़ा तथा अध्ययन हेतु आवश्यकतानुसार घुमाया तथा बदला भी जा सकता है। इसतरह एश्किन ने एक ऐसा प्लेटफार्म उपलब्ध करा दिया जहाँ, 'भौतिकी' का 'जीवविज्ञान' से मिलन होता है। उनके कार्य ने 'आणविक मोटर' के यांत्रिक गुणों के अध्ययन के साथ ही जीव-कोशिका के अंदर बड़े अणु द्वारा किये जाने वाले कार्यों के अध्ययन के लिए प्रकाश से बने एक नये औजार को जन्म दे दिया। और, इसतरह उनके 'प्रकाश-दाब' से जुड़े आविष्कारों ने 'नये अनुप्रयोगों के संसार' में प्रवेश के लिए वैज्ञानिकों हेतु रास्ता बना दिया। इसीलिए आज उन्हें 'लेसर विकिरण दाब' के क्षेत्र के पिता (Father of Laser Radiation Pressure) के नाम से जाना जाता है।

## मौरो तथा स्ट्रिकलैण्ड की शोध यात्रा : लेसर की पल्सों को क्षमतावान बनाने की तकनीक का आविष्कार

मौरो तथा स्ट्रिकलैण्ड की शोध के लिए प्रेरणा एक लोकप्रिय विज्ञान के लेख से आई जिसमें रडार (Radar) तथा लम्बी रेडियो तरंगों (Radio waves) को अवर्धित कर उन्हें शक्तिशाली बनाने के विषय में बताया गया था। लेकिन, इसमें वर्णित आइडिया को प्रकाश जैसी छोटी तरंगों के लिए व्यवहार में लाना न तो सैद्धांतिक रूप से आसान लग रहा था और न ही व्यवहारिक रूप में लाने के लिए तकनीक विकसित करना। जब स्ट्रिकलैण्ड कनाड़ा से अमरीका के रोचेस्टर विश्वविद्यालय में काम करने के लिए आयी तब वे यहाँ की प्रयोगशाला में हरे तथा लाल लेसर पुंज से उत्पन्न क्रिसमस ट्री जैसे दृश्य को देख कर चकित रह गयी। उनके शोध निर्देशक मौरौ से मिलने के बाद वे 'लेसर भौतिकी' में शोध हेतु आकृष्ट हुई। मौरौ बहुत ही शक्तिशाली 'लेसर पल्सेस' को पाने की दिशा में काम करना चाहते थे। मौरौ के पास इस समस्या के समाधान के लिए एक जबर्दस्त दृष्टि थी और कुछ अनूठा व अकल्पनीय करने का सपना था। ऐसे समय में

शोध छात्र के रूप में स्ट्रिकलैण्ड का उनकी प्रयोगशाला में आना सौभाग्य रहा।

## समस्या पर विचार

शक्तिशाली 'लेसर पल्सेस' को पाने के लिए उन्हें अत्यंत कम अवधि का होना होता है। उस समय गीगावाट की नैनो-सेकण्ड 'लेसर पल्सेस' उपलब्ध थीं। लेकिन, इसके बाद और अधिक शक्तिशील पल्सेस को पाने के लिए किये जाने वाले प्रयोग सफल नहीं हो पा रहे थे, क्योंकि ऐसा करते समय वह पदार्थ (Lasing medium) ही क्षतिग्रस्त होने लगता था, जिसमें प्रकाश आवर्धित होता था।

अतः शक्तिशाली 'लेसर पल्सेस' को प्राप्त करना प्रायोगिक स्तर पर चुनौतीपूर्ण था। उस समय वैचारिक स्तर भी इस पर काम करना आसान नहीं लग रहा था। लेकिन, आशांवित मौरौ तथा स्ट्रिकलैण्ड आत्मविश्वास के साथ संकल्पित हो कर इस दिशा में काम करने लगे। उन्होंने देखा कि 'लेसर पल्स' की शक्ति (पॉवर) को लक्ष्य पर उसके द्वारा आपतित 'प्रति सेकण्ड ऊर्जा' से मापा जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि जितने कम अवधि की पल्स होगी, उतना ही अधिक उससे मिलने वाला पॉवर होगा। यही कारण है कि शक्तिशाली लेसर पल्सेस को पाने में दिक्कत आ रही थी, क्योंकि ये कम अवधि की पल्सेस होती हैं। और, इनमें विद्यमान अधिक शक्ति (पॉवर), लेसिंग पदार्थ को ही क्षतिग्रस्त कर देती थी। अतः शक्तिशाली 'लेसर पल्सेस' को पाम्परिक तकनीकों से प्राप्त करना तत्कालीन वैज्ञानिकों को असंभव प्रतीत हो रहा था। ऐसे में इन वैज्ञानिकों को लगा कि कुछ नया सोचे और किये बगैर बात बनने वाली नहीं है।

## समाधान की दिशा

अब मौरो तथा स्ट्रिकलैण्ड ने इस समस्या से निपटने के लिए एक नये तरीके से सोचना आरंभ किया। उन्होंने सोचा कि पल्स को आवर्धित करने के पहले अगर इसे फैला दिया जाए यानि इसे स्ट्रेच कर दिया जाए तो पल्स के अधिकतम पॉवर का मान में निश्चित कमी की जा सकती है। और, एक स्थिति ऐसी भी मिल सकती है, जिसमें बिना 'लेसिंग माध्यम' को क्षति पहुँचाये पल्स को आवर्धित करना संभव हो सकता है। इसके बाद 'लेसिंग माध्यम' से बाहर निकलने वाली 'फैली हुई आवर्धित पल्स' को पुनः संकुचित यानि काम्प्रेस करने से इसके अधिकतम पॉवर के मान में कई गुना वृद्धि मिल सकती है। इस तर्क-जन्य आइडिया के आने के बाद उन्होंने इसके तकनीकी पहलुओं पर विचार किया तथा पाया कि पल्स के फैलाव (बीम स्ट्रेचर) व पल्स के संकुचन (बीम काम्प्रेसर) में प्रकाशीय उपकरण 'ग्रेटिंग' और 'प्रिज्म' अपनी अहम भूमिका निभा सकते हैं।

अब मौरो तथा स्ट्रिकलैण्ड के सामने अब बड़ी चुनौती इस आइडिया को व्यवहारिक धरातल पर उतारने एवं 'बीम-स्ट्रेचर' तथा 'बीम-काम्प्रेसर' के चयन के साथ ही अपने उपकरण के विभिन्न चरणों में उनके बीच तालमेल बिठाने की थी। अनेक प्रयोगों के बाद अंततः उन्हें 1985 में सफलता मिल गयी। अपने शोध परिणामों को उन्होंने पहले शोधपत्र में प्रस्तुत कर वैज्ञानिक जगत के सामने रखा। उन्होंने जिस तकनीक का आविष्कार किया उसमें उन्होंने प्रकाश को आवर्धित करने के पहले पल्स की फैलाया, जिससे उसकी तीव्रता में कमी आ गयी। अब इस प्रकाश को सामान्य तरीके से आवर्धित किया। इसके बाद उन्होंने पल्स को संपिडित कर लिया, जिससे कम जगह में अधिक फोटॉन समा गये। ऐसा होने से पल्स की तीव्रता कई गुना बढ़ गयी। इसे सीपीए (Chirped Pulse Amplification) तकनीक नाम से जाना गया।

बीम स्ट्रेचर के रूप में प्रिज्म

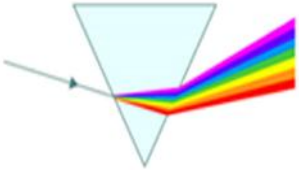

इस तकनीक ने एक नया रास्ता खोला तथा आज उच्च तीव्रता वाले लेसर के निर्माण में यह एक 'मानक तकनीक' के रूप में उभर कर सामने आयी, जिसके 'भौतिकी', 'रसायन' तथा 'चिकित्सा' के क्षेत्र में जबर्दस्त अनुप्रयोग सामने आये। इस तकनीक से आज पेटावाट ($10^{15}$ वाट) तक की पल्सेस को प्राप्त करना संभव हो गया है। मौरौ तथा स्ट्रीकलैण्ड ने इस समस्या का समाधान प्रस्तुत कर एक क्रांति ला दी। इस दिशा में भारत में भी कार्य आरंभ हुआ है। वर्तमान में हमारे यहाँ अनुसंधान हेतु दो लेसर उपलब्ध हैं, जिनसे 100 टेरावाट की 'फेम्टो सेकण्ड पल्सेस' प्राप्त की जाती हैं। इसमें से एक इन्दौर स्थित 'राजा रामन्ना सेंटर ऑफ एडवांस्ड टेक्नोलॉजी' में तथा दूसरा हैदराबाद स्थित 'एडवांस्ड सेंटर फॉर रिसर्च इन हाई एनर्जी मटेरियल्स' (Advanced Centre for Research in High Energy Materials) में स्थापित है। इस तरह लेसर का उपयोग एक औजार के रूप में सामने आया, जिसकी सहायता से क्वांटम दुनिया के बारे में अधिक से अधिक और बेहतर से बेहतर तरीके से जाना तथा उसमें इच्छित तरीके से बदलाव किया जा सकता है।

## शक्तिशाली लेसर पल्सेस का कमाल नेत्र चिकित्सा के लिए वरदान

लेसर की अत्यंत छोटी तथा पॉवरफुल पल्सेस का उपयोग 'नेत्र चिकित्सा' के क्षेत्र में एक वरदान के रूप में देखा गया। शीघ्र ही डाक्टरों ने महसूस कर लिया कि एक मूर्तिकार जिसतरह सावधानीपूर्वक अपनी मूर्ति को गढ़ता है, उसी तरह 'पल्स-लेसर' की सहायता से आँखों के आकार खो चुके कोर्निया की सतह को पुनः आकार दिया जा सकता है, जिससे आँखों के 'निकट-दृष्टि' (Myopia), दूर-दृष्टि' (Hypermetropia) तथा अन्य दृष्टि-दोषों को आसानी से दूर किया जा सकता है। इसके बाद लेसिक (Laser-Assisted in Situ Keratomileusis) तकनीक का विकास हुआ। और, आज नेत्र संबंधित विभिन्न रोगों की चिकित्सा में लेसर के अकल्पनीय अनुप्रयोग सामने आ रहे हैं।

## माइक्रो-दुनिया की कई प्रक्रियाओं को जानने तथा समझने का रास्ता खुला

शक्तिशाली लेसर पल्सेस की सहायता से माइक्रो-दुनिया की कई प्रक्रियाओं को जानने तथा समझने का रास्ता खुला है। इस दुनिया में कई प्रक्रियाएं इतनी तेज रफ्तार से सम्पन्न होती हैं कि इनको रिकार्ड करना नामुमकिन हो जाता है। लेकिन 'फेम्टो सेकेण्ड पल्सेस' के आने के बाद उन प्रक्रियाओं को समझने का अवसर मिला है, जो अचानक और एकदम

*क्वांटम दुनिया को समझने तथा मानव कल्याण के लिए समस्याओं के समाधान हेतु लेसर के नये नये तकनीकी अनुप्रयोग सामने आने लगे। एश्किन जहाँ पिण्डों की गति को नियंत्रित कर ट्रेप करने में लगे थे वहीं मौरौ तथा उनकी शोध छात्रा स्ट्रीकलैण्ड लेसर की पल्सों को क्षमतावान बनाने में लगे थे। अपने प्रयोगों के दौरान उन्होंने पाया कि लेसर के गोलों के पास आते ही आशा के अनुरूप एक ग्रेडियंट बल काम करने लगता है, जो गोलों को पूंज के केंद्र की ओर धकेल देता है, जहाँ उसकी तीव्रता अधिकतम होती है। 'मूल अवस्था' में रहने वाला परमाणु फोटॉन से अंतःक्रिया कर पहले 'उत्तेजित अवस्था' में जाना चाहिए और फिर उत्तेजित परमाणु को 'स्वतः (spontaneously) उत्सर्जित' करते हुए अपनी 'मूल अवस्था' में लौट आना चाहिए। किसी भी 'निकाय' में इसतरह के उत्सर्जित फोटानों बहुतायात में मिलना चाहिए। अपने विचार को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने सोचा कि इस निकाय में उत्तेजित अवस्था में भी कुछ परमाणु होते हैं। अगर फोटॉन इन 'उत्तेजित परमाणुओं' के साथ अंतःक्रिया करेंगे, तब क्या होगा?' निश्चित ही इस दौरान भी 'फोटॉन' उत्सर्जित होंगे। और, ये दोनों ही 'निकाय' में उपस्थित रहेंगे। हालांकि, दूसरी प्रकार के 'फोटॉनों' की संख्या अत्यंत कम होगी। उन्होंने कल्पना की कि मानो दो प्रकार के 'निकाय' हैं। पहले निकाय की आरंभिक अवस्था में सभी परमाणु अपनी मूल अवस्था में हैं, जबकि दूसरे में सभी उत्तेजित अवस्था में हैं। अब उन्होंने विचार किया कि जब निकायों को प्रकाश के किसी 'बाह्य-स्रोत' की उपस्थिति में रख दिया जाये तो हमें इन निकायों से उत्सर्जित हो कर दो प्रकार के 'फोटॉन' मिलेंगे। अब, आईंस्टीन के मन में प्रश्न उठा कि इन दो अलग-अलग तरीकों मिले फोटॉनों में क्या कुछ फर्क भी होना चाहिए? ध्यान देने पर उन्होंने पाया कि इनके गुणों में जमीन-आसमान का फर्क है। अब उन्होंने तर्क के साथ बढ़ते हुए एक चित्र बनाना आरंभ किया। इसके लिए उन्होंने 'अवशोषण' और 'उत्सर्जन' की प्रक्रिया पर ध्यान दिया। उस समय नील्स बोहर अपना 'परमाणु मॉडल' प्रस्तुत कर 'अवशोषण' तथा 'उत्सर्जन' की 'प्रक्रिया' को समझाया था। इसके अनुसार कोई भी परमाणु तब ही उत्सर्जित करता है, जब वह 'उच्च-ऊर्जा वाली कक्षा' से 'निम्न-ऊर्जा वाली कक्षा' में आता है। अब आईंस्टीन ने विचार किया कि 'उत्सर्जन' की यह प्रक्रिया अपने-आप यानि स्वतः भी हो सकती है और इसे उत्सर्जन के लिए प्रेरित कर भी किया जा सकता है। लेकिन, यह 'उत्तेजित अवस्था' में परमाणु के 'जीवन-काल' पर निर्भर करना चाहिए।*

सम्पन्न होती हैं और वैज्ञानिकों की नजर से ओझल रहती हैं। अक्सर ये प्रक्रियाएं दस-लाखवें सेकण्ड के अरबवें भाग में होती हैं, जिन्हें रिकार्ड करने के लिए अत्यंत द्रुत-गति फोटोग्राफी की जरूरत होती है। लेसर की 'फेम्टो सेकण्ड' की पल्स से किसी निकाय को उत्तेजित करने के बाद वह जिन-जिन सौपानों से गुजरते हुए अपनी अंतिम क्रिया सम्पन्न करता है, उन सभी को वास्तव में जानना संभव हो सका है। इसमें 'पम्प-लेसर पल्स' क्रिया को आरंभ करता है। अब अत्यंत कम समय में गुजरने वाले विभिन्न सोपानों को देखने के लिए 'प्रोब-लेसर पल्सेस' का सहारा लिया जाता है जो 'स्ट्रोब' (जल्दी-जल्दी जलने-बुझने वाली व्यवस्था) की तरह कार्य करती है। 'स्ट्रोब' देखने की वह तकनीक है जिसमें बहुत तेजी से आवर्ती गति करते हुए गुजरने वाली प्रक्रियाओं या वस्तुओं को देखना संभव होता है, मानो वे स्थिर हों। माना कि एक चकती १००० चक्कर प्रति सेकण्ड की दर से घूम रही है। अब अगर इसे इसी आवृत्ति पर प्रकाश की चमक छोड़ने वाले स्रोत से चमकाया जाए तो किसी एक फ्लेश के दौरान चकती उसी स्थिति में नजर आती है, जिस स्थिति में वह पिछली फ्लेश के दौरान थी। दूसरे शब्दों में, चकती स्थिर नजर आती है। लेकिन, आवृत्तियों में अंतर होने पर ऐसा नहीं होता और चकती धीरे-धीरे घूमते हुए मिलती है। इसतरह विभिन्न प्रक्रियाओं के दौरान होने वाले अणुओं और परमाणुओं की गतिविधियों को 'फेम्टो सेकण्ड' की स्ट्रोबोस्कोपिक पल्सेस' से चमका कर जैसी की तैसी स्थिति में रोक दिया जाता है, ताकि उनका अध्ययन किया जा सके।

## `एस्ट्रोफिजिक्स' का प्रायोगिक अध्ययन अब हमारी प्रयोगशालाओं में

शक्तिशाली 'लेसर पल्सेस' जब पदार्थ पर आपतित होती है और उसके के साथ अंतःक्रिया करती है, तब पदार्थ का ताप इतना अधिक बढ़ता है कि उसमें ऐसी स्थिति का निर्माण भी हो जाता है, जो सिर्फ तारों या अन्य खगोलीय पिण्डों के कोर की गहराई में ही मिलती जाता है। पदार्थ की इस तरह की अवस्था के मिलने से 'एस्ट्रोफिजिक्स' का प्रायोगिक अध्ययन प्रकृति की 'कॉस्मिक प्रयोगशाला' से शिफ्ट हो कर हमारी 'प्रयोगशालाओं' में आ गया है।

## सूर्य को धरती पर उतारने के प्रयास

लेसर की सहायता से सूर्य के पॉवर को धरती पर पाने के गंभीर प्रयास चल रहे हैं। सूर्य और तारों से मिलने वाली ऊर्जा का राज 'नाभिकीय संलयन' है। नाभिकीय संलयन की इस प्रक्रिया को वैज्ञानिकों ने समझ कर अब 'लेसर-आधारित नाभिकीय संलयन रिएक्टर' निर्माण की योजना बनाई है ताकि, ऊर्जा के आसन्न संकट से स्थायी मुक्ति पाई जा सके। अमरीका की 'लारेंस लीवरमोर नेशनल लेबोरेटरी' (Lawrence Livermore National Laboratory) में स्थित 'नेशनल इगनिशियन फेसेलिटी' (National Ignition Facility) 500 टेरा-वाट की पीको-सेकण्ड की पल्सेस को प्राप्त करने तथा अन्य तकनीकी दिक्कतों को दूर करने के लिए प्रयास कर रही है ताकि, इस रिएक्टर के निर्माण को मूर्त रूप दिया जा सके।

इस तरह हम देखते हैं कि आज इन प्रकाशीय औजारों और उपकरणों की सहायता से वैज्ञानिक इलेक्ट्रॉन, फोटॉन तथा अन्य दूसरे परमाणविक कणों में इच्छित परिवर्तन लाने में महति सफलताएं हांसिल कर रहे हैं। इससे 'लेसर भौतिकी और टेक्नॉलॉजी' के क्षेत्र में एक 'क्रांति' की शुरूआत हो गयी है तथा कई नये तथा नवाचारी अनुप्रयोगों की बाढ़ आ गयी है। इनकी सहायता से अब अणु-परमाणु, जैसी छोटी-छोटी वस्तुओं तथा अत्यंत तीव्र गति से सम्पन्न होने वाली प्रक्रियाओं के साथ ही जीवकोशिकाओं, बैक्टीरिया, वायरस आदि को बिलकुल ही नये उजाले में देखना, समझना और उनमें इच्छित परिवर्तन लाना सम्भव हो गया है। लेसर से बने औजारों के नये अवतारों की सहायता से सूक्ष्म-दुनिया के कई रहस्य उजागर हो रहे हैं तथा औद्योगिक, अकादमिक, चिकित्सा, राष्ट्रीय सुरक्षा, सूचना प्रौद्योगिकी, मनोरंजन जैसे क्षेत्रों में कई अनसोचे तथा अकल्पनीय अनुप्रयोग के साथ ही जन-हित में कई शोध कार्य हो रहे हैं।

Kapurmaljain2@gmail.com

# पोखरण अध्याय के अप्रतिम परमाण विज्ञानी

# डॉ. पी. के. आयंगर

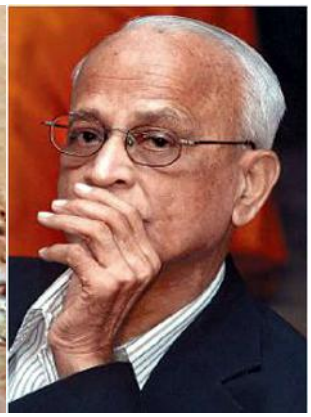

शुकदेव प्रसाद

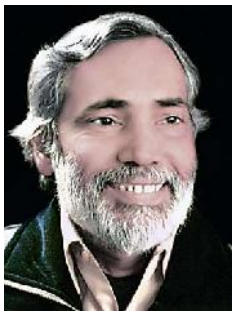

*समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार है। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार से सम्मानित वे एक मात्र भारतीय विज्ञान लेखक हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है। शुकदेव प्रसाद इलाहाबाद में रहते हैं।*

18 मई, 1974 को जोधपुर और जैसलमेर के बीच पाकिस्तान की सीमा से यही कोई 150 किमी. दूर, पोखरण क्षेत्र में प्रातः 8:05 बजे भारत ने अंतःस्फोट करके शक्ति राष्ट्रों का दर्प दमन करके अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी यशस्वी छवि निर्मित की और शक्ति संपन्न राष्ट्र बन बैठा।

भारत के इस शांति मूलक परमाणु परीक्षण के सिरमौर बने डॉ.होमी नौसेरवान जी सेठना (तत्कालीन अध्यक्ष-परमाणु ऊर्जा आयोग) और डॉ. राजा रामण्णा जो उस समय भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्राम्बे (मुंबई) के निदेशक थे। निःसंदेह ये दोनों भारत के प्रथम पोखरण अध्याय के महानायक थे लेकिन पोखरण अध्याय की सर्जना में कुछेक और भी प्रातिभ परमाणु विज्ञानियों का भी योग था जिनके अवदानों के बिना यह अध्याय रचा ही नहीं जा सकता था, उन्हीं में से एक थे प्रो. पी.के.(पद्मनाभ कृष्णगोपाल) आयंगर जिनका 80 वर्ष की वय में 21 दिसंबर, 2011 को मुंबई में निधन हो गया।

जब भारत ने अपना पहला परमाणु परीक्षण संपन्न किया था, तब डॉ.आयंगर भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (बार्क), मुंबई में भौतिकी समूह के अध्यक्ष थे। शांतिपूर्ण नाभिकीय विस्फोट (Peaceful Nuclear Explosion-PNE) के लिए उच्च दाब भौतिकी के क्षेत्र में डॉ.आयंगर के शोधकार्यों का ही अवदान था कि भारत का पोखरण अध्याय एक सकुशल सम्पन्न हुआ। बिना उसके यह परीक्षण संभव ही नहीं था। प्रकारांतर से हम ऐसा कह सकते हैं डॉ. पी.के.आयंगर पोखरण के प्रथम अध्याय के एक ऐसे नायक थे जिनके श्लाघनीय अवदानों का संज्ञान तो सभी परमाणु विज्ञानियों को है, परमाणु भौतिकी में जरा सी भी दिलचस्पी रखने वाले लोगों के लिए डॉ. आयंगर अविस्मरणीय हैं। न्यूट्रॉन भौतिकी के तो वह प्रणेता थे ही। उन्होंने 'बार्क' में इस क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के ख्यातलब्ध विज्ञानियों की टीम बनायी थी।

डॉ.आयंगर ने साठादि में स्वदेश निर्मित 'पूर्णिमा' रिएक्टर डिजाइन किया और वैज्ञानिकों के उस दल का नेतृत्व किया जिनके अवदानों से 1972 में 'पूर्णिमा' रिएक्टर ने क्रांतिकता प्राप्त की। फास्ट रिएक्टरों के क्षेत्र में परीक्षण हेतु शून्य ऊर्जा समूह वाले 'पूर्णिमा' रिएक्टर की स्थापना की गई थी। इसमें थोड़े सुधार परिवर्तन के बाद इस श्रेणी के अगले रिएक्टर 'पूर्णिमा-II' का निर्माण किया गया जो 10 मई, 1984 को क्रिटिकल हुआ। 'पूर्णिमा-III' ने 1990 में क्रांतिकता प्राप्त की। ईंधन के रूप में यूरेनियम-233 प्रयुक्त करने वाला संसार का प्रथम रिएक्टर पूर्णिमा ही है।

पूर्णिमा से प्राप्त अनुभवों के आधार पर यूरेनियम-233 से चलने वाले थोरियम चक्र पर आधारित 'कामिनी' नामक न्यूट्रॉन सोर्स रिएक्टर की डिजाइन में मदद मिली है जिसकी स्थापना इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र (पूर्व नाम रिएक्टर अनुसंधान केंद्र), कलपक्कम, चेन्नई में की जा चुकी है। पूर्णिमा रिएक्टरों की स्थापना एक ऐसी दूरंदेशी थी कि भविष्य में हमें ऊर्जा संकट से निजात मिल सकती है। हमारे पास यूरेनियम के भंडार सीमित हैं जबकि थोरियम प्रचुर मात्रा में और संसार भर में सर्वाधिक है। निकट भविष्य में यदि थोरियम चक्र पर आधारित 'कामिनी' श्रेणी के वाणिज्यिक रिएक्टरों के दौर का शुभारंभ हो गया तो ऊर्जा के अकाल से मुक्ति मिल जाएगी और

ध्रुव रिएक्टर

**भारत लौटने के उपरांत आयंगर ने न्यूट्रॉन प्रर्कीणन पर बहुविध अनुसंधान किए और 'बार्क' में विशेषज्ञों की ऐसी टीम निर्मित की जिन्होंने न्यूट्रॉन भौतिकी के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय यशस्विता अर्जित की। टी. आई.एफ.आर. में 1952 में अपने अनुसंधानों की शुरुआत में ही उन्होंने नाभिकीय रिएक्टरों के आगमन और इनसे मूलभूत अनुसंधानों तथा नाभिकीय प्रौद्योगिकी में उपलब्ध होने वाले अवसरों दोनों का ही भविष्यदर्शन कर लिया था, अतः न्यूट्रॉन स्पेक्ट्रोमीटरों के निर्माण की दिशा में सन्न) हो गए। 1956 में भारत के 1 मेगावाट क्षमता वाले तरणताल किस्म के रिएक्टर 'अप्सरा' का निर्माण हुआ और 40 मेगावाट क्षमता वाले भारत के दूसरे रिएक्टर 'साइरस' की स्थापना 1960 में हुई जो कनाडा के सहयोग से निर्मित हुई थी।**

इंदिरा गांधी के साथ डॉ.पी.के.आयंगर

हमें यूरेनियम के लिए विदेशी मदद की बाट नहीं जोहनी होगी।

आगे चलकर 7-8 अगस्त,1985 को भारत का उच्च अभिवाह (Flux) रिएक्टर 'ध्रुव' भी क्रिटिकल हो गया। इसके भी निर्माण में डॉ.आयंगर की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। जब यह क्रिटिकल हुआ तो उस समय वह भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रांबे, मुंबई के निदेशक थे।

आज भी 'ध्रुव' रिएक्टर विश्व स्तर का रिएक्टर है। इसके कमीशनिंग के अंतिम चरण में डॉ.आयंगर ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया, जिसे हम विस्मृत नहीं कर सकते। 100 मेगावाट क्षमता वाले रिएक्टर 'ध्रुव' की स्थापना से समस्थानिकों के उत्पादन में और वृद्धि हुई है।

'अप्सरा' में फास्फोरस, सोना, सल्फर, क्रोमियम तथा 'साइरस' में भी इसी तरह के लगभग 100 समस्थानिकों का उत्पादन होता है। 'ध्रुव' में आयोडीन 131, क्रोमियम 51, मालिब्डेनम 99 के उत्पादन के अतिरिक्त आयोडीन 125 का उत्पादन हो रहा है जो अभी तक हमें विदेशों से मंगाना पड़ता था।

'ध्रुव' रिएक्टर प्रतिवर्ष 30 किग्रा. प्लूटोनियम का भी उत्पादन करता है जो दूसरी पीढ़ी के तीव्र प्रजनक रिएक्टरों (Fast Breeder Test Reactor-FBTR) के लिए ईंधन का काम करता है।

'ध्रुव' की स्थापना के साथ ही भारत ने तीव्र प्रजनक तकनीक में सफलता अर्जित कर ली। 18 अक्टूबर, 1985 को प्लूटोनियम से चलने वाला दूसरी पीढ़ी का रिएक्टर (FBTR) भी क्रिटिकल हो गया जिसकी स्थापना इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र (IGCAR), कलपक्कम, चेन्नई में की गई है।

पद्मनाभ और लक्ष्मी की संतान पी.के.आयंगर का जन्म 29 जून,1953 को तमिलनाडु के तिरूनेलवेली जनपद में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा केंद्रीय प्राथमिक विद्यालय अत्ताकुलांगर, त्रिवेन्द्रम से आरंभ हुई। आगे चलकर उन्होंने एम.एच.महाराजा कॉलेज, त्रिवेन्द्रम (त्रावणकोर विश्वविद्यालय) से बी.एस.सी.(1950) और तदुपरांत वहीं से 1952 में एम.एस.सी. की उपाधि अर्जित की। उन्होंने 1963 में मुंबई विश्वविद्यालय से भौतिकी के नोबेल विज्ञानी बरट्रैम नेविली ब्रोकहाउस और डॉ.राजा रामण्णा के कुशल मार्गदर्शन में पी.एच.डी. की उपाधि अर्जित की।

एम.एस.सी. करने के उपरांत उसी वर्ष (1952) उन्होंने टाटा आधारभूत अनुसंधान संस्थान ;प्थ्त्द्ध को कनिष्ठ अनुसंधान वैज्ञानिक के रूप में ज्वाइन कर लिया। शीघ्र ही उनकी नियुक्ति कनाडा के परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान की चॉक रीवर प्रयोगशालाओं में हो गयी, जहां उन्होंने भौतिकी के नोबेल विज्ञानी डॉ.बी.एन.ब्रोकहाउस (Dr. Bertram Neville Brockhouse) से प्रशिक्षण प्राप्त किया। यहां पर उन्होंने 'जर्मेनियम में जालक गतिकी' (Lattice Dynamics in germanium) में युगांतकारी संधान किया।

भारत लौटने के उपरांत आयंगर ने न्यूट्रॉन प्रर्कीणन पर बहुविध अनुसंधान किए और 'बार्क' में विशेषज्ञों की ऐसी टीम निर्मित की जिन्होंने न्यूट्रॉन भौतिकी के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय यशस्विता अर्जित की, जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। टी.आई.एफ.आर. में 1952 में अपने अनुसंधानों की शुरुआत में ही उन्होंने नाभिकीय रिएक्टरों के आगमन और इनसे मूलभूत अनुसंधानों तथा नाभिकीय प्रौद्योगिकी में उपलब्ध होने वाले अवसरों दोनों का ही भविष्यदर्शन कर लिया था, अतः न्यूट्रॉन स्पेक्ट्रोमीटरों के निर्माण की दिशा में सन्नद्ध हो गए। 1956 में भारत के 1 मेगावाट क्षमता वाले तरणताल किस्म के रिएक्टर (Swimming Pool Water Reactor) 'अप्सरा' का निर्माण हुआ और 40 मेगावाट क्षमता वाले भारत के दूसरे रिएक्टर 'साइरस' (Canada-India Reactor Utility Service-CIRUS) की स्थापना 1960 में हुई जो कनाडा के सहयोग से निर्मित हुई थी। इन दोनों रिएक्टरों की स्थापना के पूर्व ही उन्होंने भारत को न्यूट्रॉन अनुसंधान की दिशा में त्वरा प्रदान की थी। इतना ही नहीं, उन्होंने पदार्थ विज्ञान, विकिरण भौतिकी, आण्विक जीव विज्ञान, लेजर और कण त्वरक (Particle accelerators) के अनुसंधान एवं विकास की दिशा में विज्ञानियों को उत्साहित किया। इंदौर (म.प्र.) स्थित राजा रामण्णा प्रगत प्रौद्योगिकी केंद्र (Raja Ramanna Centre for Advanced Technology-RRCAT) की स्थापना के आरंभिक चरणों में उनकी महनीय भूमिका थी। डॉ. आयंगर पोखरण परमाणु परीक्षण के समय (1974) 'बार्क' में भौतिकी दल के अध्यक्ष थे। उनके इस महत योगदान के लिए अगले वर्ष (1975) में श्रीमती इंदिरा गांधी ने उन्हें 'पद्म भूषण' से नवाजा। तदुपरांत 1984-1990 तक वह 'बार्क' के निदेशक रहे और 1990-93 तक परमाणु ऊर्जा

आयोग के अध्यक्ष तथा परमाणु ऊर्जा विभाग के सचिव जैसे उच्च पदों पर आसीन रहे।

परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष पद पर जब वह पदासीन थे, तब उन्होंने नरोरा (उ.प्र.) और ककरापार (गुजरात) के रिएक्टरों की कमीशनिंग के साथ भारत के नाभिकीय शक्ति जनन कार्यक्रम का मुखर समर्थन किया। उन्होंने इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र, कलपक्कम में एफ. बी.टी.आर. के विकास के महत्व को रेखांकित किया जिसकी स्थापना उनके जीवनकाल में ही हो चुकी थी। और अब तो शीघ्र ही भारत का प्रोटोटाइप तीव्र प्रजनक रिएक्टर (PFBR) आरंभ ही होने वाला है। 500 मेगावाट की आरंभिक क्षमता वाले इस रिएक्टर की कार्यकारी अवधि 40 वर्ष होगी। इस प्रकार भारत के तीव्र प्रजनक रिएक्टरों के वाणिज्यिक दौर का शुभारंभ होने जा रहा है। उक्त विवृत्ति से स्पष्ट है कि डॉ.आयंगर भारत के परमाणु कार्यक्रमों के अनिवार्य और अविभाज्य अंग थे। उनके अवदानों की चर्चा के बिना भारत के परमाणु संधानों का अध्याय अधूरा ही रहेगा।

आयंगर को परमाणु संधान में उनकी सुदीर्घकालीन सेवाओं के लिए शांतिस्वरूप भटनागर पुरस्कार (1971); पद्म भूषण (1975); विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी पुरस्कार, केरल सरकार (1978); फिक्की अवार्ड (1981); फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री एवार्ड ;१९८१च्छय रामन् सेंटेनरी मेडल, इंडियन एकेडमी ऑफ साइंस (1988); भाभा मेडल, इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी (1990); आर.डी.बिरला पुरस्कार, इंडियन फिजिकल एसोसिएशन (1983); जवाहर लाल नेहरू बर्थ सेंटेनरी एवार्ड (1989) और होमी भाभा मेडल (2006); से समादृत किया गया था। उन्हें भारत की तीनों विज्ञान अकादमियों की फेलोशिप भी प्रदान की गई थी।

21 दिसंबर, 2011 को 80 वर्ष की वय में डॉ. आयंगर का त्रासद निधन हो गया। यद्यपि आज डॉ. आयंगर हमारे बीच नहीं है, लेकिन जब-जब हम भारत के प्रथम पोखरण अध्याय से रूबरू होंगे, उनकी स्मृतियां जीवंत हो उठेंगी। निस्संदेह डॉ. आयंगर के वैज्ञानिक अवदानों पर हम सभी भारतीयों को नाज़ है। उनकी यशः काया आज भी विद्यमान है और उनका व्यक्तित्व-कृतित्व भावी पीढ़ियों के लिए सतत प्रेरणा पुंज है।

यहां यह उल्लेखनीय है कि डॉ. आयंगर मुखर प्रतिभा के घनी थे। उन्होंने कभी भी राजनयिकों की कोई परवाह नहीं की, आखिर वे ठहरे रामण्णा के ही शिष्य ही थे। जब भारत-अमेरिका के बीच 2005 में असैन्य परमाणु समझौता (Civil Nuclear Deal) हुई तो उन्होंने इसका विरोध किया था और साफ शब्दों में कहा था कि यह समझौता भारत के नहीं अपितु अमेरिका के पक्ष में है। इस समझौते (एग्रीमेंट 123) का कोई भी मनमानी अर्थ निकाल सकता है। इस समझौते में अमेरिका ने बड़ी चालाकी से यह उल्लिखित किया है कि भारत के परमाणु रिएक्टरों की नाभिकीय ईंधनों की आपूर्ति की वह कोई गारंटी नही ले सकता है। इसके पलट भारत-रूस के बीच जो 'सिविल न्यूक्लियर डील' हुई उसमें परमाणु रिएक्टरों के काल तक परमाणु ईंधनों की आपूर्ति जारी रहेगी। यह भी सच है कि आज तक भारत-अमेरिका के बीच हुई डील ने अमली जामा नहीं पहना है और न ही अमेरिका ने भारत को 'शक्ति राष्ट्र' की संज्ञा दी है।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि डॉ. आयंगार ने एक अवसर पर (1998) राष्ट्र को दिग्भ्रमित होने से बचाया। बताते चलें कि 24 वर्षों के अंतराल के बाद भारत ने पुनः परमाणु परीक्षण किए। भारत ने 13 मई, 1998 को तीन परीक्षण उसी पोखरण की मरूभूमि में किया था जिसमें से एक हाइड्रोजन बम बनाने का प्रयास मात्र था। इसकी क्षमता मात्र 43 किलोटन थी। यह सर्वमान्य तथ्य है कि परमाणु बम की क्षमता किलोटन और हाइड्रोजन बम की क्षमता मेगाटन में नापी जाती है। हमने कोशिश की लेकिन हम हाइड्रोजन बम नहीं बना सके। आर. चिदांबरम् (परमाणु ऊर्जा आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष) और ए पी जे अब्दुल कलाम ने इसे हाइड्रोजन बम का परीक्षण घोषित किया। कहना न होगा कि डॉ. आयंगर ने एक प्रेस कांफ्रेंस बुलाकर देश को दिग्भ्रमित होने से बचा लिया। उन्होंने कहा कि "They are trying to befool the nation and themselves too"| और इस प्रकार इस प्रकरण का समाधान हो गया। वे देश और स्वयं को धोखा दे रहे हैं (इशारा चिदंबरम और कलाम की ओर था।)

**डॉ. आयंगर मुखर प्रतिभा के घनी थे। उन्होंने कभी भी राजनयिकों की कोई परवाह नहीं की, आखिर वे ठहरे रामण्णा के ही शिष्य ही थे। जब भारत-अमेरिका के बीच 2005 में असैन्य परमाणु समझौता (Civil Nuclear Deal) हुई तो उन्होंने इसका विरोध किया था और साफ शब्दों में कहा था कि यह समझौता भारत के नहीं अपितु अमेरिका के पक्ष में है। इस समझौते (एग्रीमेंट 123) का कोई भी मनमानी अर्थ निकाल सकता है। इस समझौते में अमेरिका ने बड़ी चालाकी से यह उल्लिखित किया है कि भारत के परमाणु रिएक्टरों की नाभिकीय ईंधनों की आपूर्ति की वह कोई गारंटी नही ले सकता है। इसके पलट भारत-रूस के बीच जो 'सिविल न्यूक्लियर डील' हुई उसमें परमाणु रिएक्टरों के काल तक परमाणु ईंधनों की आपूर्ति जारी रहेगी।**

sdprasad24oct@yahoo.com

# भारत का मानवयुक्त स्पेस मिशन

# गगनयान

डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र

*डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में पीएच-डी. की उपाधि प्राप्त की। आप टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मुंबई के होमी भाभा विज्ञान केन्द्र में एसोसिएट प्रोफेसर हैं। लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में आपकी अपार ख्याति है जोकि हिन्दी में आपके व्यापक लेखन से निर्मित हुई है। आपके 250 से अधिक लेख तथा 22 पुस्तकें प्रकाशित हैं। राजभाषा गौरव पुरस्कार, होमी जहाँगीर भाभा स्वर्ण पुरस्कार, शताब्दी सम्मान, राजभाषा भूषण पुरस्कार, इस्वा सम्मान सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित डॉ.मिश्र मुंबई में निवास करते हैं।*

भारत सन् 2022 तक अपने अंतरिक्ष यात्रियों को स्पेस में भेजेगा। इसकी घोषणा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने बीते 15 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हुए की। उन्होंने इस मिशन को 'गगनयान' नाम दिया। तभी से यह खबर मीडिया जगत की सुर्खियों में है। हर कोई इसकी चर्चा करते हुए देखा जा सकता है। गगनयान शब्द लोकप्रिय हो गया है तथा लोगों की जुबान पर चढ़ गया है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) पहली बार अपने मिशन 'गगनयान' के द्वारा किसी भारतीय अंतरिक्ष यात्री को सात दिनों के लिए अंतरिक्ष में भेजने की तैयारी कर रहा है। इससे पहले भारतीय एयरफोर्स के पायलट रहे राकेश शर्मा रूसी अंतरिक्ष यान सोयूज के जरिए सन् 1984 में अंतरिक्ष में गए थे। इसके अलावा भारतीय मूल की अमेरिकन कल्पना चावला तथा सुनीता विलियम्स भी अंतरिक्ष में जा चुकी है। इन्हें अमेरिकन अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' द्वारा अंतरिक्ष में भेजा गया था। भारत सरकार ने सन् 1962 में भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति का गठन किया था। सन् 1969 में इस समिति का स्थान भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने ले लिया गया। तब से लेकर अब तक भारत अंतरिक्ष के क्षेत्र में सफलता के कई सोपान तय कर चुका है। लेकिन अपने स्वयं के अंतरिक्ष यान से किसी भारतीय को स्पेस में भेजने का कार्य अभी तक अधूरा रहा है। अब तक केवल अमेरिका, रूस और चीन ही अंतरिक्ष में इंसान को भेजने में कामयाब हुए हैं। गगनयान की सफलता के साथ भारत भी इन देशों की कतार में खड़ा हो जाएगा।

इस वर्ष के स्वतंत्रता दिवस पर राष्ट्र को संबोधित करते हुए देश के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा था कि, "मैं आज देशवासियों को एक खुशखबरी दे रहा हूँ। सन् 2022 में जब देश की आजादी के 75 वर्ष पूरे होंगे, या हो सके तो उससे पहले, मां भारती की कोई संतान, चाहे बेटा या बेटी, अंतरिक्ष में जाएगा। उसके हाथ में तिरंगा होगा। इसके साथ ही भारत मानव को अंतरिक्ष में भेजने वाला दुनिया का चौथा देश बन जाएगा।" बाद में इसकी पुष्टि इसरो ने भी की। इसरो के अध्यक्ष डॉ.के. सिवन ने कहा कि यह अभियान इसरो के मानवयुक्त मिशन 2022 का हिस्सा है। इस पर करीब 10,000 करोड़ रुपये खर्च होगा। उन्होंने यह भी बताया कि इस मानवयुक्त मिशन में इस्तेमाल किया जाने वाला रॉकेट जियोसिन्क्रोनस सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल, मार्क-3 (जीएसएलवी -एमके-3) होगा। दरअसल इसरो के द्वारा इस मिशन की तैयारी काफी दिनों से चल रही है। इस मिशन के लिए जरूरी बहुत-सी अत्याधुनिक तकनीकें पहले ही विकसित की जा चुकी हैं। इनमें क्रू-मॉड्यूल और इस्केप-सिस्टम शामिल हैं जिनका परीक्षण हो चुका है। गगनयान में उड़ान भरने वाले अंतरिक्ष यात्रियों का चयन भारतीय वायुसेना द्वारा किया जाएगा और उनको विदेशों में प्रशिक्षण दिया जाएगा।

भारत के इस महत्वाकांक्षी मिशन में सहयोग प्रदान करने के लिए फ्रांस ने रजामंदी दी है। मिशन 'गगनयान' में दोनों देश मिलकर काम करेंगे। इस संबंध में दोनों देशों के मध्य एक समझौते पर दस्तखत भी हो चुका है। सहमतिपत्र पर हस्ताक्षर होने के मौके पर फ्रांसीसी अंतरिक्ष एजेंसी

सीएनईएस के अध्यक्ष ज्यां येव्स ली गॉल ने कहा कि इस अंतरिक्ष सहयोग के दायरे में इसरो को अंतरिक्ष अस्पताल केंद्रों की सुविधा देना और अंतरिक्ष औषधि, अंतरिक्ष यात्रियों के स्वास्थ्य की निगरानी करने, जीवनरक्षा संबंधी सहयोग मुहैया कराने, विकिरणों से रक्षा, अंतरिक्ष के मलबे से रक्षा और निजी स्वच्छता व्यवस्था के क्षेत्रों में संयुक्त रूप से अपनी विशेषज्ञता का इस्तेमाल करना शामिल हैं। दोनों देशों ने मिलकर इस परियोजना के लिए एक कार्यकारी समूह का गठन भी किया है।



**गगनयान मानवयुक्त अंतरिक्ष यान होगा जिसे उन्नत संस्करण डॉकिंग क्षमता से लैस किया जाएगा। इस यान में द्रव प्रणोदक (लिक्विड प्रोपेलेन्ट) से युक्त इंजन होंगे। ऑर्बिटल मॉडयूल के दो हिस्से होंगे। एक-क्रू मॉडयूल तथा दूसरा सर्विस मॉडयूल। क्रू मॉडयूल 3.7 मीटर व्यास में एक सर्कुलर क्यूबिकल जैसा होगा, जिसकी ऊँचा सात मीटर और वजन सात टन होगा। इसी मॉडयूल में तीनों अंतरिक्ष यात्री रहेंगे। सर्विस मॉडयूल में तापमान और वायुदाब को नियत रखने वाले उपकरण, लाइफ सपोर्ट सिस्टम, ऑक्सीजन और खाने-पीने का सामान होगा। अंतरिक्ष से धरती की ओर लौटते समय स्पेसक्रॉफ्ट की गति को धीरे-धीरे कम किया जाएगा।**

## मानवयुक्त अंतरिक्ष मिशन का इतिहास

सर्वप्रथम कामयाब मानव अंतरिक्ष मिशन का श्रेय तत्कालीन सोवियत संध को जाता है। सोवियत संध (वर्तमान रूस) द्वारा कास्मोनॉट यूरी गागरिन को 12 अप्रैल सन् 1961 को अंतरिक्ष में भेजा गया था। इसके पश्चात 5 मई सन् 1961 को अमेरिकन एस्ट्रोनॉट एलन शेफर्ड अंतरिक्ष में पहुँचने वाले दूसरे व्यक्ति थे। उन्हें अमेरिकन अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' द्वारा अंतरिक्ष में भेजा गया था। इसी क्रम में चीन के द्वारा अपने पहले मानवयुक्त अंतरिक्ष मिशन के तहत सन् 2003 में टैक्नॉट यांग लिवेइ को अंतरिक्ष में भेजा गया।

## भारत का गगनयान मिशन

भारत के गगनयान मिशन की बुनियाद सन् 2004 में ही पड़ गई थी जब ह्यूमन स्पेसफ्लाइट प्रोग्राम की शुरुआत की गई। इसके तहत अब तक कई तकनीकें विकसित कर ली गयी हैं। अन्य कई पर तेजी से काम चल रहा है। इसी क्रम में 5 जुलाई 2018 को 'क्रू माड्यूल इस्केप सिस्टम' का सफलतापूर्वक परीक्षण किया जा चुका है। वर्तमान में ह्यूमन स्पेसफ्लाइट प्रोग्राम की अगुवाई करने की जिम्मेदारी वी.आर.ललिताम्बिका को दी गई। डॉ.ललितताम्बिका 'एस्ट्रोनॉटिकल सोसायटी एक्सीलेंस अवॉर्ड' से पुरस्कृत हो चुकी है। गगनयान पहला भारतीय चालित कक्षीय अंतरिक्षयान होगा, जिसे तीन एस्ट्रोनॉट को ले जाने की क्षमता के हिसाब से डिजाइन किया जाएगा। जिस प्रकार अमेरिका के अंतरिक्ष यात्री को एस्ट्रोनॉट तथा रूस के अंतरिक्ष यात्री को कॉस्मोनॉट और चीन के अंतरिक्ष यात्री को टैक्नॉट कहा जाता है। उसी प्रकार अंतरिक्ष में भेजे जाने वाले भारतीय एस्ट्रोनॉट को 'व्योमनॉट' कहा जाएगा। 'व्योम' संस्कृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ अंतरिक्ष होता है। गगनयान से सम्बन्धित प्रमुख जानकारियाँ इस प्रकार हैं;

- गगनयान को लॉन्च करने के लिए जीएसएलवी एमके-3 लॉन्च व्हीकल का उपयोग किया जाएगा जो इस मिशन के लिए आवश्यक पेलोड क्षमता से परिपूर्ण है। अंतरिक्ष में मानव भेजने से पहले दो मानव रहित गगनयान भेजे जाएंगे।
- पृथ्वी से 300-400 किलोमीटर की दूरी मात्र 16 मिनट में तय की जाएगी। इस अंतरिक्ष यान को निम्न पृथ्वी कक्षा में रखा जाएगा।
- गगनयान सात दिनों तक 400 किलोमीटर की ऊँचाई पर पृथ्वी की परिक्रमा करेगा।
- 30 महीने के भीतर पहली मानव रहित उड़ान के साथ ही कुल कार्यक्रम के सन् 2022 से पहले पूरा होने की उम्मीद है।
- कार्यक्रम की कुल अनुमानित लागत 10,000 करोड़ रुपये होगी।
- अंतरिक्ष कैप्सूल के अन्दर तीनों व्योमनॉड को रखा जाएगा, जिसके अन्दर जीवन नियंत्रण एवं पर्यावरणीय नियंत्रण प्रणाली उपस्थित होंगी।
- यात्रियों का चयन इसरो और एयरफोर्स मिलकर करेंगे। हालांकि अभी यह तय नहीं है कि इसमें कितनी महिला या कितने पुरुष होंगे, और किस क्षेत्र विशेष के होंगे। लेकिन पहले पायलटों को प्राथमिकता दी जा सकती है। चुने गए यात्रियों को करीब तीन साल की ट्रेनिंग मिलेगी, जिसमें जीरो ग्रेविटी ट्रेनिंग भी शामिल होगी।
- गगनयान को वापस लौटते समय 36 मिनट का समय लगेगा।
- गगनयान की निगरानी बैंगलोर स्थित टेलीमेट्री ट्रैकिंग कमांड सेंटर से की जाएगी।

## गगनयान की संरचना

गगनयान मानवयुक्त अंतरिक्ष यान होगा जिसे उन्नत संस्करण डॉकिंग क्षमता से लैस किया जाएगा। इस यान में द्रव प्रणोदक (लिक्विड प्रोपेलेन्ट) से युक्त इंजन होंगे। ऑर्बिटल मॉड्यूल के दो हिस्से होंगे। एक-क्रू मॉड्यूल तथा दूसरा सर्विस मॉड्यूल। क्रू मॉड्यूल 3.7 मीटर व्यास में एक सर्कुलर क्यूबिकल जैसा होगा, जिसकी ऊँचाई सात मीटर और वजन सात टन होगा। इसी मॉड्यूल में तीनों अंतरिक्ष यात्री रहेंगे। सर्विस मॉड्यूल में तापमान और वायुदाब को नियत रखने वाले उपकरण, लाइफ सपोर्ट सिस्टम, ऑक्सीजन और खाने-पीने का सामान होगा। अंतरिक्ष से धरती की ओर लौटते समय स्पेसक्राफ्ट की गति को धीरे-धीरे कम किया जाएगा। पृथ्वी से 120 किलोमीटर की ऊँचाई पर क्रू मॉड्यूल, सर्विस मॉड्यूल से अलग हो जाएगा। क्रू मॉड्यूल से यात्री पैराशूट के जरिए गुजरात के पास अरब सागर में उतरेंगे। अगर कोई दिक्कत हुई तो फिर बंगाल की खाड़ी में भी उतरने का विकल्प रहेगा।

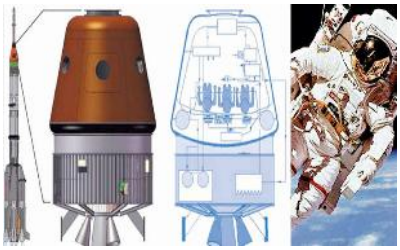

**भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन इसरो ने आम जनता के लिए तथा देश की सेवा के लिए अंतरिक्ष विज्ञान को उपयोगी बनाने के ध्येय को सदा बनाए रखा है। यह विश्व की छठवीं सबसे बड़ी अंतरिक्ष एजेंसी बन गया है। वर्तमान समय में इसरो के पास संचार उपग्रह (इन्सैट) तथा सुदूर संवेदन (आई. आर.एस.) उपग्रहों का वृहद समूह उपस्थित है, जो द्रुत तथा विश्वसनीय संचार एवं प्रेक्षण की बढ़ती मांग को पूरा करता है। प्रसारण, संचार, मौसम पूर्वानुमान, आपदा प्रबंधन उपकरण, भौगोलिक सूचना प्रणाली, मानचित्रकला, नौवहन, दूर-चिकित्सा से संबंधित उपग्रहों को अंतरिक्ष में प्रमोचन का महत्वपूर्ण कार्य इसरो द्वारा किया जाता है।**

## गगनयान के उद्देश्य

जब भी किसी महान कार्य को अंजाम दिया जाता है तो उसके पीछे बहुत-सी महत्वाकांक्षाएं एवं उद्देश्य जुड़े होते हैं। गगनयान मिशन भारत की एक महत्वाकांक्षी परियोजना है। इसके मूल में तमाम सारी संभावनाएं एवं अवसर सन्निहित हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं-

- देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का स्तरोन्नयन।
- अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देश की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि।
- युवाओं के लिए प्रेरणादायी मिशन स्थापित करना।
- इस राष्ट्रीय परियोजना के जरिये तमाम संस्थानों, अकादमियों और उद्योगों के बीच सहयोग तथा सहभागिता को बढ़ाना।

## गगनयान का महत्व

गगनयान इसरो द्वारा स्वदेश में विकसित पहला मानव मिशन होगा जो देश के युवाओं को बड़ी चुनौतियों का सामना करने और देश की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करेगा। इसरो के अध्यक्ष डॉ.के. सिवन ने कहा कि गगनयान मिशन के तहत अगले तीन साल में 15 हजार लोगों को रोजगार मिलेग। इसमें करीब 900 लोगों को इसरो में प्रत्यक्ष नौकरी के अवसर मिलेंगे। इस तरह के मिशन के सामरिक आयाम भी होते हैं। इस मिशन की कामयाबी से हमारी अंतरिक्ष एजेंसी की प्रतिष्ठा में श्रीवृद्धि होगी तथा विश्व फलक पर उसकी विश्वनीयता बहुत बढ़ जाएगी।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने आम जनता के लिए तथा देश की सेवा के लिए अंतरिक्ष विज्ञान को उपयोगी बनाने के ध्येय को सदा बनाए रखा है। यह विश्व की छठवीं सबसे बड़ी अंतरिक्ष एजेंसी बन गया है। वर्तमान समय में इसरो के पास संचार उपग्रह (इन्सैट) तथा सुदूर संवेदन (आई.आर.एस.) उपग्रहों का वृहद समूह उपस्थित है, जो द्रुत तथा विश्वसनीय संचार एवं भू प्रेक्षण की बढ़ती मांग को पूरा करता है। प्रसारण, संचार, मौसम पूर्वानुमान, आपदा प्रबंधन उपकरण, भौगोलिक सूचना प्रणाली, मानचित्रकला, नौवहन, दूर-चिकित्सा से सम्बन्धित उपग्रहों को अंतरिक्ष में प्रमोचन का महत्वपूर्ण कार्य इसरो द्वारा किया जाता है। इसरो द्वारा भारत के साथ-साथ अन्य 28 देशों के लगभग 237 उपग्रहों का सफलतापूर्वक प्रमोचन किया जा चुका है। मंगलयान, चंद्रयान नामक मिशन इसरो द्वारा सफलतापूर्वक तथा न्यूनतम लागत में अंतरिक्ष में भेजे जा चुके हैं। इसरो के गौरवशाली अतीत को देखते हुए लोगों को आशा ही नहीं वरन पूर्ण विश्वास है कि यह संस्था गगनयान मिशन को भी सफलतापूर्वक पूर्ण कर लेगी।

इसरो ने इस कार्यक्रम के लिए आवश्यक पुनर्प्रवेश मिशन क्षमता, क्रू एस्केप सिस्टम, क्रू मॉड्यूल कॉन्फ़िगरेशन, तापीय संरक्षण व्यवस्था, मंदन एवं प्रवर्तन व्यवस्था, जीवन रक्षक व्यवस्था की उप-प्रणाली इत्यादि जैसी कुछ महत्वपूर्ण तकनीकों का विकास कर लिया है। इन प्रौद्योगिकियों में से कुछ का, मसलन अंतरिक्ष कैप्सूल रिकवरी प्रयोग (एसआरई-2007), क्रू मॉड्यूल वायुमंडलीय पुनर्प्रवेश प्रयोग (केयर-2014) और पैड एबॉर्ट टेस्ट (2018) के माध्यम से सफलतापूर्वक परीक्षण किया जा चुका है। ये प्रौद्योगिकियां इसरो को चार साल की छोटी अवधि में कार्यक्रम के उद्देश्यों को पूरा करने में बहुत मददगार साबित होंगी। गगनयान मिशन के लिए एक खास स्पेस सूट तैयार किया गया है। इसरो द्वारा इस विशेष स्पेस शूट को छठवें बेंगलुरु स्पेस एक्सपो में प्रदर्शित किया गया। यह सूट केसरिया रंग का है। गगनयान के तहत तीन अंतरिक्ष यात्रियों को अंतरिक्ष में भेजा जाएगा। उसके लिए तीन सूटों की जरूरत पड़ेगी। गगनयान मिशन के लिए इसरो ने फिलहाल दो स्पेस सूट तैयार कर लिए हैं। तीसरे सूट पर काम अभी चल रहा है। प्रत्येक सूट में एक ऑक्सीजन सिलेंडर फिट होगा जो अंतरिक्ष में यात्रियों को ऑक्सीजन उपलब्ध कराएगा। केसरिया रंग के इन सूटों को तिरुवनन्तपुरम स्थति विक्रम साराभाई स्पेस सेंटर में तैयार किया गया है। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' द्वारा भी अपने एस्ट्रोनॉट के लिए केसरिया रंग का सूट तैयार किया था। इस रंग को चुनने की वजह जब नासा के वैज्ञानिकों से पूछी गई थी तो उन्होंने बताया था कि सुरक्षा और खोज के लिहाज से यह चटखदार रंग बहुत मददगार होता है। इसके अलावा बेंगलुरु स्पेस एक्सपो में स्पेस रिसर्च बॉडी द्वारा क्रू मॉडल और क्रू एस्केप मॉडल को भी प्रदर्शित किया गया। स्वाधीनता दिवस पर लाल किले से प्रधानमंत्री जी द्वारा इस मिशन के ऐलान के बाद से इसरो ने अपने व्योमनॉट्स को अंतरिक्ष में भेजने की तैयारियां और तेज कर दी हैं। उम्मीद करें कि वर्ष 2022 तक हम यह उपलब्धि हासिल कर लेंगे। देश के करोड़ों लोगों को गगनयान को 'शुभ यात्रा' कहने का बेसब्री से इंतजार है।

vigyan.lekhak@gmail.com

# पीएसएलवी-सी 42

## द्वारा ब्रिटेन के दो उपग्रहों का प्रमोचन

कालीशंकर

16 सितम्बर, 2018 को भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने अपने 'सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र, भाार से ब्रिटेन के दो उपग्रहों- 'नोवा सार' और 'एस 1-4' का प्रक्षेपण किया और सफलतापूर्वक कक्षा में स्थापित किया। 'नोवा सार' का इस्तेमाल वन्य मानचित्रण, भू उपभोग और बर्फ की निगरानी, बाढ़ और आपदा निगरानी के लिए किया जाना है। दूसरे उपग्रह 'एस 1-4' का उपयोग संसाधनो के सर्वेक्षण, पर्यावरण निगरानी, शहरी प्रबंधन तथा आपदा निगरानी के लिए किया जायेगा। दोनो उपग्रहों को लेकर पीएसएलवी-सी 42 राकेट रविवार रात 10:08 बजे सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र के प्रथम लाँच पैड से रवाना हुआ। पी एस एल वी ने उपग्रहों को प्रक्षेपण के 17 मिनट 45 सेकन्ड बाद कक्षा में स्थापित कर दिया। इसरो अध्यक्ष डॉ.के. सिवान ने कहा कि मिशन सफल रहा। प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने इस अवसर पर ट्वीट किया और कहा, ''हमारे अन्तरिक्ष वैज्ञानिकों को बधाई। इसरो ने पीएसएलवी-सी 42 का सफल प्रक्षेपण किया और ब्रिटेन के दो उपग्रहों को कक्षा में पहुँचाया। यह प्रतिस्पर्धा अन्तरिक्ष कारोबार में भारत के महासामर्थ्य को दर्शाता है।''

इसरो के वरिष्ठ वैज्ञानिक विगत लगभग चालीस वर्षों से अंतरिक्ष विज्ञान और अंतरिक्ष अन्वेषण पर लेखन करते रहे हैं। तीन सौ से अधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपे तथा 25 पुस्तकें प्रकाशित हुईं हैं। आपको कई राष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित किया गया है। कालीशंकर लखनऊ में निवास करते हैं।

### पी एस एल वी-सी 42 मिशन

पीएसएलवी-सी 42 उड़ान एक पूर्ण रूपेण समर्पित व्यवसायिक मिशन था जिसके द्वारा उपरि वर्णित दो ब्रिटिश उपग्रह (सूरे उपग्रह तकनीकी लि. के) प्रमोचित किये गये। इस मिशन में पी एस एल वी राकेट के 'कोर एलोन' (पीएसएलवी-सीए) का प्रयोग किया गया। यह 'कोर एलोन' स्वरूप पी एस एल वी की 12वीं पी एस एल वी राकेट की 44वीं तथा सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र, सार के प्रथम प्रमोचन पैड से सम्पन्न 33वीं पी एस एल वी उड़ान थी। मिशन का निर्धारित लक्ष्य था 583 कि.मी. ऊँचाई तथा 97.806 डिग्री झुकाव वाली ध्रुवीय सूर्य समकालिक कक्षा को प्राप्त करना जिसे सफलता पूर्वक प्राप्त किया गया। मिशन का उत्थापन भार 230.4 टन तथा राकेट की ऊँचाई 44.4 मीटर थी। पीएसएलवी-सी 42 मिशन के तकनीकी आंकड़े सारणी-1 में दिये गये हैं।

### सारणी-1 गणक स्टेज

| क्र. | गणक | प्रथम स्टेज (पीए-1) | द्वितीय स्टेज (पीएस-2) | तृतीय स्टेज (पीएस-3) | चौथी स्टेज (पीएस-4) |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | ईंधन | संयुक्त ठोस | भू संचयित | संयुक्त ठोस | भू संचयित द्रव |
| 2 | ईंधन भार (टन) | 138.2 | 42.0 | 7.6 | 2.5 |
| 3 | व्यास (मीटर) | 2.8 | 2.8 | 2.0 | 1.34 |
| 4 | लम्बाई (मीटर) | 20 | 12.8 | 3.6 | 3.0 |
| 5 | इष्टतम निर्वात प्रणोद (कि. न्यूटन) | 484 | 6.980 | 3.7823 | 9.62733 |

16 सितम्बर, 2018 को रात के 10:08 बजे पी एस एल वी का सबसे हल्का स्वरूप कोर एलोन (बिना 6 स्ट्रैप आज मोटर के) रूप में भार केन्द्र से प्रक्षेपित हुआ। लगभग 18 मिनट बाद

सारणी-2

पीएसएलवी-सी 42 मिशन उड़ान प्रोफाईल

| क्र. | घटना का नाम | उत्थापन के बाद | पृथ्वी से ऊँचाई | गति (मीटर प्रति से.) |
|---|---|---|---|---|
| 1. | प्रथम स्टेज प्रज्वलन | 0 मि. 0 से. | 0.026 | 451.89 |
| 2. | प्रथम स्टेज विलगाव | 1 मि. 50.96 से. | 49.367 | 1561.46 |
| 3. | द्वितीय स्टेज प्रज्वलन | 1 मि. 51.16 से. | 49.555 | 1560.46 |
| 4. | नीतभार फेयरिंग विलगाव | 3 मि. 2.36 से. | 111.492 | 2233.05 |
| 5. | द्वितीय स्टेज विलगाव | 4 मि. 23.56 से. | 200.5863 | 669.70 |
| 6. | तृतीय स्टेज प्रज्वलन | 4 मि. 24.76 से. | 201.997 | 3666.14 |
| 7. | तृतीय स्टेज विलगाव | 8 मि. 9.46 से. | 454.805 | 5482.73 |
| 8. | चौथी स्टेज प्रज्वलन | 8 मि. 19.86 से. | 463.794 | 5468.75 |
| 9. | चौथी स्टेज कट ऑफ | 16 मि. 56.56 से. | 587.402 | 7561.44 |
| 10. | नोवासार और एस 1-4 उपग्रहों का विलगाव | 17 मि. 44.06 से. | 585.303 | 7566.69 |

दोनों उपग्रह इसरो द्वारा निर्धारित कक्षा में स्थापित कर दिये गये। मिशन निदेशक आर हटन ने कहा, ''यह एक विशिष्ट मिशन था। हमने उपग्रहों को अत्यधिक इच्छित परिशुद्ध कक्षा में स्थापित कर दिया है।'' इन दोनो उपग्रहों को पृथ्वी के ध्रुवों के ऊपर से गुजरने वाली 583 कि.मी. की ऊँचाई की कक्षा में स्थापित किया गया। इसरो की व्यवसायिक शाखा ऐन्ट्रिक्स कार्पोरेशन को इस प्रमोचन से 220 करोड़ रूपये प्राप्त हुए।

इस मिशन के लिए तैयारियाँ मध्य जुलाई (2018) से वेहिकल इन्टीग्रेशन प्रक्रिया से प्रारंभ हुईं। इसरो के कई केन्द्रों ने इस मिशन के लिए योगदान दिया। प्रमोचन राकेट का विकास तिरूवन्तपुरम के विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र में किया गया। दूसरी और चौथी स्टेजों के द्रव इंजन एल.पी.एस.सी. केन्द्र तिरूवन्तपुरम और इसरो प्रापल्सन केन्द्र, महेन्द्रगिरी से आये। वेहिकल गाइडेन्स तंत्र इसरो की इनर्शियल इकाई तिरूवन्तपुरम से आया जब कि भार केन्द्र ठोस ईंधन मोटर तैयारी, वेहिकल इन्टीग्रेशन और प्रमोचन के लिए उत्तरदायी था। इसरो के दूरमिति, अनुवर्तन और दूरादेश नेटवर्क ने अनुवर्तन सपोर्ट प्रदान किया।

## प्रमोचित किये गये उपग्रहों का विवरण

प्रमोचित दो उपग्रहों:- 'नोवा सार' और 'एस 1-4' के तकनीकी विवरण निम्न हैं:-

1. **नोवा सार** : यह एक एस-बैन्ड सिंथेटिक अपर्चर रेडार प्लैटफार्म है। इसमें दो प्रकार के नीतभार लगे हुए हैं जिसमें एक एस-बैन्ड संश्लेषी द्वारक रेडार है तथा दूसरा स्वचालित पहचान रिसीवर है। इसका उत्थापन भार 445 कि.ग्रा. था। इसका निर्माण और डिजाइन सस्ते कार्यक्रमों के लिए किया गया है तथा भोयर्ड प्रमोचन सुविधाओं के लिए इसे उपयोगी पाया गया है। इसका जीवन काल सात वर्ष का है। इसके प्रमुख उपयोग निम्न हैं:-

क) जंगली क्षेत्रों का मानचित्रण
ख) भू उपयोग और बर्फ आच्छादन प्रक्रिया का मानीटरन
ग) जलपोतों का संसूचन और विभिन्न समुद्री मानीटरन
घ) बाढ़ का मानीटरन
च) आपदा प्रबन्धन

2. **एस 1-4** : यह एक उच्च विभेदन प्रकाशिकी भू-प्रेक्षण उपग्रह है जिसका उत्थापन भार 444 कि.ग्रा. था। इसका जीवन काल सात वर्ष है तथा इसमें पावर के लिए सोलर सेल बैटरियों का प्रयोग किया गया है। इसमें दो उपकरण लगे हैं:-

क) प्राकृतिक स्रोतों का सर्वेक्षण
ख) पर्यावरण मानीटरन और भाहरी प्रबंधन
ग) आपदा प्रबंधन

## पीएसएलवी-सी 42 मिशन की उड़ान प्रोफाईल

पीएसएलवी-सी 42 मिशन के लिए काउन्टडाउन 15 सितम्बर, 2018 को दोपहर के बाद 01:08 बजे प्रारंभ हुआ। मिशन का प्रक्षेपण 16 सितम्बर, 2018 को रात को 10 बजकर 8 मिनट पर हुआ। मिशन की उड़ान प्रोफाईल सारणी-2 में दी गई है।

## पी एस एल वी-सी 42 मिशन के कुछ दिलचस्प तथ्य

ये तथ्य निम्न हैं:-

1. वर्तमान मिशन के दो उपग्रहों के प्रमोचन के बाद इसरो के द्वारा प्रमोचित विदेशी उपग्रहों की संख्या अब 239 हो गई है।
2. यह मिशन पूरी तरह से एक व्यवसायिक मिशन था जिसमें कोई भारतीय उपग्रह नहीं था।
3. यह पी.एस.एल.वी. राकेट की 44 वीं उड़ान तथा इसके 'कोर एलोन' स्वरूप की 12वीं उड़ान थी। यह इसरो का इस साल का तीसरा प्रमोचन था।
4. यह पी.एस.एल.वी. श्रेणी का सबसे हल्का राकेट था।
5. इसरो का यह मिशन लगभग 6 महीने बाद सम्पन्न हुआ जब इसरो ने 12 अप्रैल, 2018 को अपना आई.आर.एन.एस.एस-1 उपग्रह अन्तरिक्ष कक्षा में स्थापित किया।

ksshukla@hotmail.com

# अब क्या कर रहा है भारत का मंगलयान ?

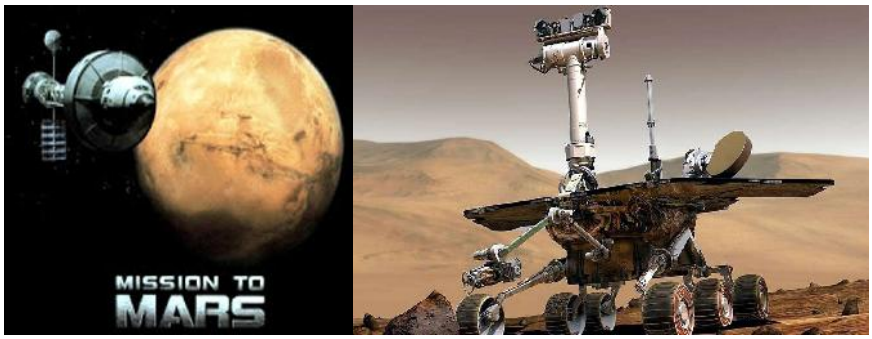


शशांक द्विवेदी

*राजस्थान मेवाड़ यूनिवर्सिटी के उपनिदेशक शशांक द्विवेदी 'टेक्नीकल टुडे' नामक पत्रिका का संपादन कर रहे हैं। वे विगत दो दशकों से विज्ञान संचारक और विज्ञान लेखन के रूप में भी कार्य कर रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपके लेख नियमित रूप से प्रकाशित एवं चर्चित हुए हैं।*

आज से लगभग 4 साल पहले जब मंगलयान ने मंगल की कक्षा में प्रवेश किया था तो भारत की इस सफलता का डंका पूरी दुनिया में बजा था लेकिन उसी समय कुछ विशेषज्ञों ने मंगलयान में लगे उपकरणों की मियाद सिर्फ 6 महीने की बताई थी ,लेकिन आज भी मंगलयान न सिर्फ अपने मिशन पर सफलतापूर्वक काम कर रहा है बल्कि उसके सभी उपकरण सुचारू रूप से काम कर रहें हैं। 5 नवम्बर 2013 को प्रक्षेपण और 24 सितंबर 2014 को मंगल की कक्षा में प्रवेश करने के बाद आज लगभग 4 साल बाद भी भारत का ऐतिहासिक मार्स ऑर्बिटर मिशन (एमओएम) यानी मंगलयान अच्छी तरह से काम कर रहा है और मिशन से जुड़ी हुई जरूरी तस्वीरें इसरो और नासा के साथ साझा कर रहा है। फिलहाल मंगलयान की कक्षा में कुछ सुधार किया जाएगा ताकि यह अगले कई वर्षों तक काम करता रहे। अंतरिक्ष विशेषज्ञों के अनुसार मंगलयान की कक्षा में सुधार के जरिये उसकी बैटरी की जिंदगी बढ़ाने की कोशिश की जाएगी। यह इसलिए भी जरूरी है कि लंबे ग्रहण के दौरान भी मंगलयान को ऊर्जा मिलती रहे। कक्षा में सुधार नहीं किया गया तो यह निस्तेज हो सकता है क्योंकि लंबे ग्रहण के दौरान बैटरी इसका साथ छोड़ सकती है। कक्षा में सुधार होने से बैटरी पर ग्रहण का असर आधा रह जाएगा, जिससे सेटेलाइट कई वर्षों तक काम करता रह सकता है। इसकी वजह से हमें मंगल ग्रह से जुड़ी गतिविधियों का अध्ययन करने में और समय मिल जाएगा।

## भारत का प्रथम मंगल अभियान

मंगलयान (मार्स ऑर्बिटर मिशन), भारत का प्रथम मंगल अभियान है और यह भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) की एक महत्वाकांक्षी अन्तरिक्ष परियोजना है। इस परियोजना के अन्तर्गत 5 नवम्बर 2013 को 2 बजकर 38 मिनट पर मंगल ग्रह की परिक्रमा करने हेतु छोड़ा गया एक उपग्रह आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान (पीएसऍलवी) सी-25 के द्वारा सफलतापूर्वक छोड़ा गया था । इसके साथ ही भारत भी अब उन देशों में शामिल हो गया है जिन्होंने मंगल पर अपने यान भेजे हैं। वैसे अब तक मंगल को जानने के लिये शुरू किये गये दो तिहाई अभियान असफल भी रहे हैं परन्तु 24 सितंबर 2014 को मंगल पर पहुँचने के साथ ही भारत विश्व में अपने प्रथम प्रयास में ही सफल होने वाला पहला देश तथा सोवियत रूस, नासा और यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के बाद दुनिया का चौथा देश बन गया है। इसके अतिरिक्त ये मंगल पर भेजा गया सबसे सस्ता मिशन भी है। भारत एशिया का भी ऐसा करने वाला प्रथम पहला देश बन गया। क्योंकि इससे पहले चीन और जापान अपने मंगल अभियान में असफल रहे थे। प्रतिष्ठित 'टाइम' पत्रिका ने मंगलयान को 2014 के सर्वश्रेष्ठ आविष्कारों में शामिल किया था। 19 अप्रैल 1975 में स्वदेश निर्मित उपग्रह 'आर्यभट्ट' के प्रक्षेपण के साथ अपने अंतरिक्ष सफर की शुरूआत करने वाले इसरो की यह सफलता भारत की अंतरिक्ष में बढ़ते वर्चस्व की तरफ इशारा करती है। ये सफलता इसलिए खास है क्योंकि भारतीय प्रक्षेपण राकेटों की विकास लागत ऐसे ही विदेशी प्रक्षेपण राकेटों की विकास लागत का एक-तिहाई है ।

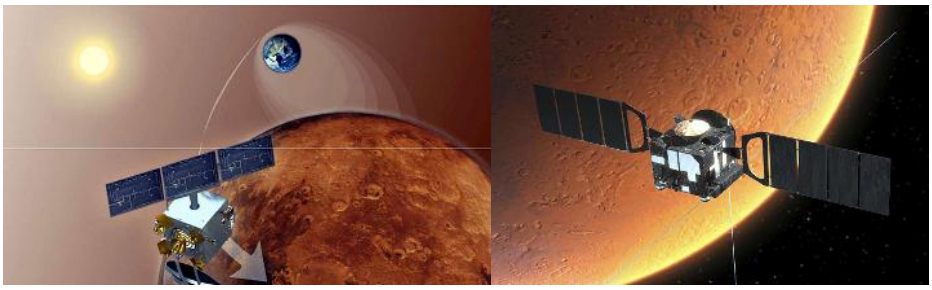

## मंगल अभियान, कब क्या हुआ

मिशन की शुरुआत हुई 5 नवंबर 2013 को जब श्रीहरिकोटा के सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से रॉकेट ने उड़ान भरी और 44 मिनट बाद रॉकेट से अलग हो कर उपग्रह पृथ्वी की कक्षा में आ गया।

- 7 नवंबर 2013 को मंगलयान की कक्षा बढ़ाने की पहली कोशिश सफल रही।
- 8 नवंबर 2013 को मंगलयान की कक्षा बढ़ाने की दूसरी कोशिश सफल रही।
- 9 नवंबर 2013 को मंगलयान की एक और कक्षा सफलतापूर्वक बढ़ाई गई।
- 11 नवंबर 2013 मंगलयान की कक्षा बढ़ाने की चौथी सफल कोशिश।
- 12 नवंबर 2013 मंगलयान की कक्षा बढ़ाने की पांचवीं कोशिश सफल रही।
- 16 नवंबर 2013 मंगलयान को आखिरी बार कक्षा बढ़ाई गई।
- 1 दिसंबर 2013 को मंगलयान ने सफलतापूर्वक पृथ्वी की कक्षा छोड़ दी और मंगल की तरफ बढ़ चला।
- 4 दिसंबर 2013 को मंगलयान पृथ्वी के 9.25 लाख किलोमीटर घेरे के प्रभावक्षेत्र से बाहर निकल गया।
- 11 दिसंबर 2013 को अंतरिक्षयान में पहले सुधार किए गए।
- 22 सितंबर 2014 को मंगलयान अपने अंतिम चरण में पहुंच गया। मंगलयान ने मंगल के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में प्रवेश कर लिया।
- 24 सितंबर 2014 को मंगल की कक्षा में प्रवेश करने के साथ ही मंगलयान भारत के लिए ऐतिहासिक पल लेकर आया। इसके साथ ही भारत पहली ही बार में मंगल मिशन में सफलता हासिल करने वाला दुनिया का पहला देश बन गया।

## अब क्या कर रहा है मंगलयान

मंगल पर मीथेन गैस की मौजूदगी का पता लगाने के लिए भेजा गया मंगलयान रिटायरमेंट के बाद भी कमाई कर रहा है। वैसे तो इसके छह माह ही काम करने की उम्मीद थी, लेकिन चार साल बाद भी इसकी भेजी तस्वीरों को अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा खरीद रहा है। इनके जरिए नासा मंगल पर मीथेन की मौजूदगी को लेकर जल्द किसी नतीजे पर पहुंच सकता है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के चेयरमैन डॉ। के। सिवन ने बताया कि करार के तहत नासा मंगलयान की तस्वीरें ले रहा है। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी इन तस्वीरों एवं आंकड़ों का इस्तेमाल शोध कार्य में कर रही है। इसरो वैज्ञानिक भी इस कार्य में जुटे हैं। उन्होंने बताया कि मंगलयान में लगे सभी पांच उपकरण अच्छी तरह काम कर रहे हैं। इसरो के वरिष्ठ अधिकारी आर। उमा महेश्वरन ने भी तस्वीरें साझा करने की पुष्टि की। हालांकि इससे होने वाली आय पर उन्होंने टिप्पणी नहीं की। उन्होंने कहा, इसरो समेत कई महकमों के वैज्ञानिक मंगलयान के आंकड़ों पर शोध पत्र तैयार कर रहे हैं। नासा भी इसी आधार पर शोध पत्र तैयार कर सकता है। हाल में नासा ने चंद्रयान में लगे उपकरण की तस्वीरों के आधार पर चंद्रमा पर बर्फ होने का दावा किया था। चंद्रयान में नासा ने मून मिनरोलॉजी मैपर लगाया था जबकि मंगलयान में उसका कोई उपकरण नहीं है। मंगलयान में लगे सभी पांचों उपकरण इसरो के हैं जो सीधे हसन स्थित मुख्य नियंत्रण कक्ष से जुड़े हैं। इसरो के अनुसार, मंगलयान अभी अगले तीन-चार साल तक काम करता रहेगा।

पिछले कई सालों से यह जानने की कोशिशें चलती रही हैं कि पृथ्वी के बाहर जीवन है या नहीं। इस दौरान कई खोजों से ये अंदेशा हुआ कि शायद मंगल ग्रह पर जीवन है। लाल ग्रह यानी मंगल पर जीवन की संभावनाओं को लेकर वैज्ञानिकों ही नहीं, आम आदमी की भी उत्सुकता लंबे अरसे से रही है। पृथ्वी से लाल रंग के दिखाई देने वाले ग्रह पर अब सभी की निगाहें टिकी हैं। आखिर मंगल की सच्चाई क्या है? ऐसे कई सारे सवाल हैं, जिनके जवाब तलाशने के लिए दूसरे देशों के कई अभियान मंगल ग्रह पर भेजे भी गये। जिनमें लगभग एक तिहाई सफल रहें बाकी असफल रहें लेकिन इस बार लेकिन भारत का मार्स आर्बिटर मिशन अपने पहले ही मंगल अभियान पर सफल रहा। भारत के इस मिशन की लागत 450 करोड़ रुपए है जो कि अमेरिका के मंगल मिशन से १० गुना कम है। यान के साथ 15 किलो का पेलोड भेजा गया है इनमें कैमरे और सेंसर जैसे उपकरण शामिल हैं, जो मंगल के वायुमंडल और उसकी दूसरी विशिष्टताओं का अध्ययन करके तस्वीरें भेजते रहे हैं। मंगलयान का मुख्य फोकस संभावित जीवन, ग्रह की उत्पत्ति, भौगोलिक संरचनाओं और जलवायु आदि पर रहा। मंगल की कक्षा में स्थापित हो जाने के बाद मंगलयान ने इसके वायुमंडल, खनिजों और संरचना से जुड़ी तस्वीरें भेजीं है। मंगलयान में पांच अहम उपकरण मौजूद हैं जो मंगल ग्रह के बारे में अहम जानकारियां जुटाने का काम कर रहे हैं। इन उपकरणों में मंगल के वायुमंडल में जीवन की निशानी और मीथेन गैस का पता लगाने वाले सेंसर, एक रंगीन कैमरा और ग्रह की सतह और खनिज संपदा का पता लगाने वाला थर्मल इमेजिंग स्पेक्ट्रोमीटर जैसे उपकरण शामिल हैं। इसके अलावा मंगल के ऊपरी वायुमंडल में ड्यूटेरियम एवं हाइड्रोजन कणों की मौजूदगी, वायुमंडल की प्राकृतिक संरचना और खनिजों की जांच के लिए भी उपकरण भेजे गए थे।

कुल मिलाकर 4 साल बाद भी मंगलयान का सुचारू रूप से काम करना भारतीय तकनीकी सफलता और कुशलता की अभिपुष्टि है। वास्तव में हम विज्ञान और तकनीक के युग में जी रहे है, जो देश तकनीकी इनोवेशन की दिशा में काम करेगा या उन्नत तकनीक का इस्तेमाल करेगा ,वो उत्तरोत्तर प्रगति की दिशा में कदम बढ़ाएगा।

dwivedi.shashank15@gmail.com

# हिमालय भी खतरे में

विजन कुमार पाण्डेय

हिमालय पर्वत शृंखला में अक्सर हलचल होती रहती है। इसका प्रभाव भारत समेत भूटान, तिब्बत, नेपाल, पाकिस्तान और अफगानिस्तान पर पड़ता है। भूवैज्ञानिकों का कहना है कि हिमालय भौगोलिक रूप से जीवंत है। उनके अनुसार प्रतिवर्ष हिमालय के आकार में बीस एमएम बढ़ोत्तरी होती है। हिमालय में लगातार बदलाव और विकास के कारण यहाँ भूस्खलन और भूकंप की आशंका बढ गई है जो खतरनाक साबित हो सकती है। ऐसा माना यह जाता है कि हिमालय का अस्तित्व 70 करोड़ वर्षों से भी अधिक पुराना है। भारत और एशिया में बड़े पैमाने पर विस्फोटक टकराव के उपरांत इस पर्वत श्रृंखला का जन्म हुआ। हिमालय की ऊँची शिखरें सदियों से भारत की रक्षा करती आई हैं। भारत, चीन ऑर मंगोलिया के बीच हिमालय एक प्राकृतिक अवरोधक के रूप में भी है। हिमालय पर्वत श्रेणियों का विस्तार चीन में 75 फीसदी है। नेपाल में हिमालय को समगर्मथा कहा जाता है जिसका अर्थ है ब्रह्मांड की देवी। नेपाल में इसे फॉरहेड ऑफ दी स्काई भी कहा जाता है। हिमालय की चढाई जितनी रोचक है उतनी ही खतरनाक भी। ऐवेरेस्ट की मृत्यु दर 9 फीसदी है। अभी तक 150 से भी अधिक लोग इसकी चढाई करते समय अपनी जान गंवा चुके हैं।

*विजन कुमार पाण्डेय लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं और शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े हैं। उन्होंने विगत तीन दशकों में तीन सौ से अधिक लेख लिखे हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में वे नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपकी रचनाओं की कई-कई पाठक हैं जो आपके काम को रेखांकित करते रहते हैं।*

## हिमालयी क्षेत्र में भी दूषित पानी

धरती की रचना की दृष्टि से हिमालय एक मेरूदंड की तरह है। केवल हिमालय और उसके तराई वाले क्षेत्रों का ही संपोषण हिमालय के विभिन्न स्रोतों से नहीं होता, बल्कि यह समूचे एशिया और पूर्वी यूरोप के साझा जल-स्रोत का भी आधार है और यूरेशिया की जलवायु का एक प्रमुख कारक भी है। लेकिन अब हिमालय खतरे में है। उत्पादन की प्रचलित तरीकों के कारण कार्बन का अत्यधिक उत्सर्जन हिमालय को हिमालय नहीं रहने देने पर आमादा है। ध्रुवीय क्षेत्रों को अगर हम छोड़ दें तो दुनिया में सबसे अधिक बर्फ निर्माण हिमालय में ही होता है लेकिन वैज्ञानिकों को ऐसी आशंका है कि कार्बन-उत्सर्जन की तीव्र गति के कारण अगले बीस से तीस बरस में हिमालय के ग्लेशियर पूरी तरह पिधल जाएंगे। नतीजतन सौ करोड़ से ज्यादा लोग पानी के लिए तरस कर अपना घर-बार छोड़कर अन्यत्र जाने को मजबूर होंगे और यह इस शताब्दी की असामान्य हृदय विदारक त्रासदी होगी। हिमालयी क्षेत्र में खराब पानी की स्थिति चिंताजनक है। हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र और इसके जल निकायों को एकीकृत और टिकाऊ तरीके से प्रबंधित करने की आवश्यकता है। पश्चिमी घटों की तरह हिमालय, वाटरशेड के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों को पानी, भोजन, ऊर्जा और असंख्य पारिस्थितिक तंत्र की सेवाएं प्रदान करता है। अब यह स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग ने बारिश के पैटर्न, बर्फबारी और अंततः हिमालय से निकलने वाली जलधाराओं के प्रवाह को प्रभावित कर रही है। इससे हिमालयी क्षेत्र के परिदृश्य में परिवर्तन हो सकते हैं, जो लगभग 1.5 अरब लोगों पर विनाशकारी प्रभाव डालेंगे। यहां भोजन के अलावा, ऊर्जा की मांग एक और चुनौती है। सौभाग्य से हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र में

ऐसी मांगों को पूरा करने की क्षमता है, बशर्ते इसकी क्षमता का भरपूर उपयोग किया जा सके। उदाहरण के लिए, नेपाल की वर्तमान स्थापित जल विद्युत क्षमता 753 मेगावाट है, जबकि इसकी व्यवहार्य क्षमता 43,000 मेगावाट है। जल धाराओं की ऊर्जा क्षमता को मजबूत करने से विद्युत ऊर्जा में वृद्धि होगी और गरीबी कम होगी। हालांकि, जल भंडारण और जलविद्युत के लिए ऐसी संरचनाओं को स्थापित करते समय, अपस्ट्रीम-डाउनस्ट्रीम लिंक पर विचार किया जाना चाहिए। डेटा साझा करने और ऐसी संरचनाओं की संयुक्त निगरानी में पारदर्शिता पड़ोसी देशों के बीच सहयोग को मजबूत करेगी।

हिमालय में अनुमानित 50,000 हिमनद हैं। भूटान और नेपाल जैसे पहाड़ी देशों के लिए यह वरदान साबित होंगे। गर्मी के महीनों में ये ग्लेशियर सिंचाई का एक प्रमुख स्रोत हैं। वे कृषि और बड़ी आबादी की आजीविका का स्रोत हैं। हालांकि, जलवायु परिवर्तन के कारण हिमनद पिघल रहे हैं और पीछे हट रहे हैं। जिसके कारण वहां लगातार और अप्रत्याशित विनाशकारी बाढ़ आने का खतरा बढ़ गया है। यह पशुधन और हिमालयी क्षेत्र के लोगों के आजीविका के लिए गंभीर खतरे के संकेत हैं। इसके लिए नदियों में पानी के प्रवाह को कम करने, अनियमित और मूसलाधार बारिश गिरने और इस क्षेत्र में लगातार बाढ़ रोकने के लिए उचित प्रबंधन की आवश्यकता है। दरअसल हिमालयी क्षेत्र में कृषि पूर्णतया जल-केंद्रित हैं। वैसे भी भारत में 90 प्रतिशत कृषि शुद्ध जल पर निर्भर है। आने वाले वर्षों में, बढ़ती आबादी के लिए पर्याप्त भोजन के लिए अधिक पानी की आवश्यकता होगी। इन कारकों को ध्यान में रखते हुए, ऐसी भविष्यवाणी है कि पाकिस्तान और भारत जैसे कुछ हिमालयी देश 2025 और 2035 के बीच 'पानी दुर्लभ देशों' में बदल जाएंगे। भोजन के अलावा, ऊर्जा की मांग एक और चुनौती है। सौभाग्य से, हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र में ऐसी मांग को पूरा करने की क्षमता है, बशर्ते इसकी क्षमता का भरपूर उपयोग किया जा सके। पानी, मानवता के लिए एक प्राकृतिक उपहार है। हालांकि, बुनियादी ढांचे की कमी और बेसिन देशों के भू-राजनीतिकरण के कारण यह झगड़े का कारण बनता रहा है। मेकांग, गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र समेत हिमालयी क्षेत्र में प्रमुख नदियां प्रकृति में ट्रांसबाउंडरी हैं और इनके कारण अक्सर संघर्ष हुआ करते हैं। नदी के पानी के साझाकरण से अक्सर पड़ोसी देशों के बीच तनाव का कारण बनता है। यद्यपि कुछ हिमालयी देशों के बीच नदी के पानी को साझा करने के बीच द्विपक्षीय संधि मौजूद हैं फिर भी तनाव बना रहता है।

## पानी में आर्सेनिक की उपस्थिति

जल का स्वास्थ्य से सीधा संबंध है। पीने के पानी में रसायनों की उपस्थिति गंभीर स्वास्थ्य समस्याओं का कारण बन सकती है। हिमालयी क्षेत्र के लोग भूजल पर सबसे अधिक निर्भर हैं। वे पानी के प्रमुख स्रोत पर ज्यादा निर्भर हैं। दुर्भाग्य से, आर्सेनिक, जो कई तरह की बीमारियों का कारण है, भूजल में पाया जा रहा है। बांग्लादेश, भारत और चीन में लाखों लोगों को पीने के पानी में आर्सेनिक के असुरक्षित स्तर का उपभोग करने का खतरा है। देश के कई भागों में आर्सेनिक युक्त जल पीने के कारण लोग कैंसर की चपेट में आ रहे हैं। पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा बिहार के अनेक गाँवों में भूजल में आर्सेनिक तत्व पाए जाने की पुष्टि वैज्ञानिकों ने की है। पश्चिम बंगाल के कई गाँवों में पीने के पानी में प्रति लीटर 3.20 मि.ग्रा। आर्सेनिक पाया गया है, जो सरकार द्वारा निर्धारित मानक से 64 गुणा अधिक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन डब्ल्यू.एच.ओ. ने पीने के पानी में आर्सेनिक की प्रति लीटर मात्रा 0.01 मि.ग्रा. तय की हुई है, जबकि भारत सरकार ने 0.05 मि.ग्रा. तक आर्सेनिक का मानक तय किया हुआ है। पीने के पानी में इससे अधिक आर्सेनिक होना स्वास्थ्य के लिए जान लेवा सिद्ध हो सकता है।

## सुनामी का खतरा

पिछले बीस सालों से सूनामी विनाश का पर्याय बन गया है। दुनिया के अलग अलग इलाकों में यह तबाही मचाता रहा है। इस तबाही को रोकने में हम पूरी तरह सफल नहीं रहे हैं। वैज्ञानिकों ने भविष्य में इस तरह की आपदाएं बढ़ने की चेतावनी दी है। पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है। इस कारण समुद्र का जलस्तर भी बढ़ रहा है। समुद्र के जलस्तर में थोड़ी सी वृद्धि भी सूनामी जैसी कहर ला देगी। 2004 में हिंद महासागर, 2011 में जापान और फिर सितंबर 2018 में इंडोनेशिया में आई

**पिछले बीस सालों से सूनामी विनाश का पर्याय बन गया है। दुनिया के अलग अलग इलाकों में यह तबाही मचाता रहा है। इस तबाही को रोकने में हम पूरी तरह सफल नहीं रहे हैं। वैज्ञानिकों ने भविष्य में इस तरह की आपदाएं बढ़ने की चेतावनी दी है। पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है। इस कारण समुद्र का जलस्तर भी बढ़ रहा है। समुद्र के जलस्तर में थोड़ी सी वृद्धि) भी सूनामी जैसी कहर ला देगी। 2004 में हिन्द महासागर, 2011 में जापान और फिर सितंबर 2018 में इंडुनेशिया में आई सूनामी में हुए विनाश को हमने देखा है।**
**'द इम्पॉसिबल' जैसी फिल्मों में इसके दृश्य दर्शाये गए हैं। इंडोनेशिया की ताजा सूनामी में लगभग 1,350 लोग मारे गए जबकि इससे पहले जापान में लगभग 16 हजार और हिन्द महासागर की सूनामी में सवा दो लाख लोगों की जानें गईं।**

सूनामी में हुए विनाश को हम देखा है। 'द इम्पॉसिबल' जैसी फिल्मों में इसके दृश्य दर्शाये गए हैं। इंडोनेशिया की ताजा सूनामी में लगभग 1,350 लोग मारे गए जबकि इससे पहले जापान में लगभग 16 हजार और हिंद महासागर की सूनामी में सवा दो लाख लोगों की जानें गईं। समुद्र में जलस्तर का बढ़ना बहुत बड़े खतरे की घंटी है। यह सूनामी के को बढ़ाएगा। आने वाले समय में छोटी सूनामी भी उतनी ही विनाश करेगी जितना बड़ी सूनामी। हाल ही में इंडोनेशिया में जिस तरह की सूनामी आई, उसका परिणाम 50 साल बाद और भी घातक होगा, क्योंकि दुनिया के उस हिस्से में जलस्तर बढ़ रहा है और जमीन नीचे जा रही है। चीन के मकाऊ इलाके को सूनामी से सुरक्षित माना जाता है। लेकिन अगर जलस्तर इसीतरह बढ़ता रहा तो वह भी सुरक्षित नहीं रहेगा। जो इलाके सूनामी से सुरक्षित हैं और जहाँ बाढ़ के लिए दो से तीन मीटर ऊँची लहरों की जरूरत पड़ती है, वहाँ आगे चलकर 1.5 से 2 मीटर ऊँची लहरें ही भारी बाढ़ ला सकती हैं।

सुनामी ने साल 2011 में जापान में भीषण तबाही मचायी थी। इसका असर समंदर के भीतर रहने वाले जीव-जंतुओं पर भी पड़ा। एक रिसर्च के मुताबिक जापान की करीब 289 प्रजातियां अब अमेरिकी तटों पर पहुँच गईं हैं। शोधकर्ताओं का दावा है कि ये प्रजातियां जो सुनामी के दौरान जापान से निकली थीं और अमेरिका में पश्चिमी तट तक पहुँचने में सफल रहीं, इन प्रजातियों में मछलियां, घोंघे, कीड़े, केकड़े और शैवाल प्रमुख हैं। शोध से पता चला कि इनमें से कुछ समंदर के भीतर जिंदा रहे तो कुछ का जन्म रास्ते में ही हुआ। जीवों की ये प्रजातियां 600 अलग-अलग वस्तुओं के भीतर मिलीं हैं। इन वस्तुओं में प्लास्टिक के छोटे टुकड़ों से लेकर बड़े-बड़े जहाज भी शामिल हैं। यहाँ सवाल यह है कि ये जीव-जंतु इन वस्तुओं में भीतर कैसे पहुँचे? वैज्ञानिकों के मुताबिक ऐसे जीवों का प्लास्टिक के जरिये आना अब भी बना हुआ है क्योंकि लकड़ियों और अन्य जैविक पदार्थों का सड़ना 2014 के बाद समाप्त हो गया है।

वैज्ञानिकों ने संभावना जतायी है कि आने वाले सालों में समंदरों के भीतर होने वाली यह अदला-बदली और बढ़ेगी जिसका एक बड़ा कारण समंदर में प्लास्टिकों का बढ़ना है। हर साल समुद्र तट पर एक करोड़ टन प्लास्टिक पहुँच जाता है और भविष्य में इसमें इजाफे के ही संकेत मिलते हैं। दूसरा कारण है जलवायु परिवर्तन, जो भविष्य में होने वाले प्राकृतिक बदलावों की ओर इशारा करता है। भूकंप, तूफान, बाढ़ आदि आपदायें स्थानीय जीवों के स्थानांतरण में बहुत बड़ी भूमिका निभा रही हैं। 2011 की सूनामी तब और भयानक हो गई थी जब समुद्र से उठे तूफान और भीषण लहरों की चपेट में जापान के फुकुशिमा का परमाणु संयंत्र भी आ गया। परमाणु ऊर्जा के पक्षधर इसे बेहद सुरक्षित और पर्यावरण सम्मत बताते थे। लेकिन सूनामी से बर्बाद हो फुकुशिमा संयंत्र से पैदा हुई रेडियो सक्रियता ने इन दावों को गलत साबित कर दिया। 9 तीव्रता वाले भूकंप से उपजी सूनामी के कारण जापान के उत्तरी तटीय इलाके में मौजूद फुकुशिमा परमाणु संयंत्रों पर भी शक्तिशाली तूफान और लहरों का हमला हुआ। रिएक्टरों में टूट फूट हुई और परमाणु छड़ों के गलने से निकले विकिरणों के कारण जापान को भीषण परमाणु दुर्धटना झेलनी पड़ी।

## सबक लेने की जरूरत

कुछ देशों ने फुकुशिमा की तबाही से सबक लिया। वे परमाणु ऊर्जा से दूर रहने की बात करने लगे। जर्मनी ने परमाणु ऊर्जा को पूरी तरह नकार दिया। वह सौर तथा पवन ऊर्जा के विकल्प की ओर ज्यादा निवेश करना शुरू किया। जर्मनी में अभी भी आठ परमाणु बिजलीघर काम कर रहे है, कभी बीस हुआ करते थे। अगले 6 सालों में उन्हें भी बंद कर दिया जाएगा। हालांकि इससे सबक सभी देशों ने नहीं लिए। बहुत से देशों ने फुकुशिमा को मुख्य रूप से प्राकृतिक आपदा समझा। खुद जापान ने कुछ साल परमाणु बिजली घरों को बंद करने के बाद फिर से परमाणु संयंत्रों को चालू कर दिया। फ्रांस और अमेरिका ने कभी इसके बारे में सोचा ही नहीं। सिर्फ जर्मनी ने फुकुशिमा के सबक को लागू किया है। नीदरलैंड से लगी जर्मनी की सीमा के पास ही काल्कर के एक पुराने न्यूक्लियर पावर प्लांट को साहसिक खेलों के लिए एक रोचक पार्क में बदल दिया गया है। ये सबक सुनामी से भी पहले का है।

यूक्रेन में हुए चेर्नोबिल परमाणु संयंत्र हादसे की तबाही को देखते हुए इस परमाणु संयंत्र को कभी भी इस्तेमाल न करने का फैसला लिया गया है। भारत में भी समुद्रतटीय राज्य तमिलनाडु

**कुछ देशों ने फुकुशिमा की तबाही से सबक लिया। वे परमाणु ऊर्जा से दूर रहने की बात करने लगे। जर्मनी ने परमाणु ऊर्जा को पूरी तरह नकार दिया। वह सौर तथा पवन ऊर्जा के विकल्प की ओर ज्यादा निवेश करना शुरू किया। जर्मनी में अभी भी आठ परमाणु बिजलीघर काम कर रहे है, कभी बीस हुआ करते थे। अगले 6 सालों में उन्हें भी बंद कर दिया जाएगा। हालांकि इससे सबक सभी देशों ने नहीं लिए। बहुत से देशों ने फुकुशिमा को मुख्य रूप से प्राकृतिक आपदा समझा। खुद जापान ने कुछ साल परमाणु बिजली घरों को बंद करने के बाद फिर से परमाणु संयंत्रों को चालू कर दिया। फ्रांस और अमेरिका ने कभी इसके बारे में सोचा ही नहीं। सिर्फ जर्मनी ने फुकुशिमा के सबक को लागू किया है।**

आज वास्तविकता यह है कि धरती गरमा रही है जो भविष्य के लिए खतरे की घंटी है। जैसे-जैसे तापमान बढता है बर्फ पिघलने लगते हैं। इससे समुद्र का जल स्तर बढने लगता है और सुनामी के खतरे बढ जाते हैं। बाढ़, जलवायु परिवर्तन और मानवीय लापरवाही की वजह से होने वाले भूमिकटाव के कारण भारत के तटीय इलाकों की जमीन भी तेजी से समुद्र में समा रही है। पिछले 26 सालों में देश का एक तिहा तटीय इलाका समुद्र में डूब गया है। तटीय इलाको में भूमिकटाव के कारण आसपास रहने वाली आबादी के लिए बड़ा खतरा बढ गया है। अगर शीघ्र इस पर अंकुश नहीं लगाया गया तो और ज्यादा जमीन और आधारभूत ढांचा समुद्र में समा जाएगा। इस नुकसान की भरपाई मुश्किल से हो पाएगी।

के कुडनकुलम में भी रूस की मदद से 2000 मेगावाट का परमाणु संयंत्र लगाया गया है। इस परमाणु संयंत्र का भी स्थानीय लोगों और पर्यावरणवादियों की ओर से भारी विरोध हुआ है। भारत दिसंबर 1984 में पहले ही भोपाल गैस त्रासदी झेल चुका है। जिसमें यूनियन कार्बाइड के कारखाने से हुए गैस रिसाव के चलते करीब 3,787 लोग मारे गए थे और लाखों लोगों को भयानक रोगों से जूझना पड़ा। इसके चलते भोपाल गैस पीड़ित भी कुडनकुलम में लगाए गए परमाणु संयंत्र का विरोध कर रहे हैं।

आज वास्तविकता यह है कि धरती गरमा रही है जो भविष्य के लिए खतरे की घंटी है। जैसे जैसे तापमान बढता है बर्फ पिघलने लगते हैं। इससे समुद्र का जल स्तर बढने लगता है और सुनामी के खतरे बढ जाते हैं। बाढ़, जलवायु परिवर्तन और मानवीय लापरवाही की वजह से होने वाले भूमिकटाव के कारण भारत के तटीय इलाकों की जमीन भी तेजी से समुद्र में समा रही है। पिछले 26 सालों में देश का एक तिहाई तटीय इलाका समुद्र में डूब गया है।

तटीय इलाकों में भूमिकटाव के कारण आसपास रहने वाली आबादी के लिए बड़ा खतरा बढ गया है। अगर शीघ्र इस पर अंकुश नहीं लगाया गया तो और ज्यादा जमीन और आधारभूत ढांचा समुद्र में समा जाएगा। इस नुकसान की भरपाई मुश्किल से हो पाएगी। इससे तटीय इलाकों में स्थित गावों व शहरों में रहने वाली आबादी को भारी नुकसान पहुंचेगा। तटीय इलाकों के पानी में समाने से खेती को भी काफी नुकसान होगा। एक रिपोर्ट के मुताबिक, नौ राज्यों और दो केंद्रशासित क्षेत्रों में भूमिकटाव का खतरा लगातार बढ़ रहा है। वर्ष 1990 से 2016 के बीच देश के तटवर्ती इलाकों में 34 फीसदी जमीन को भूमिकटाव की गंभीर समस्या का सामना करना पड़ा है। इसकी वजह से पश्चिम बंगाल की 99 वर्गकिमी और पूरे देश में तटीय इलाकों की 234.25 वर्गकिमी जमीन समुद्र में समा चुकी है।

## हिमालयी क्षेत्र में भी पानी स्त्रोत सूख रहे

हिमालय क्षेत्र में जो जगह-जगह पानी के स्रोत थे, वे सूखते जा रहे हैं। टिहरी-डैम का पानी दिल्ली को तो मिला लेकिन वहां के लोग इसी कारण कृषि व पेय-जल से वंचित होते चले गए। हिमालय क्षेत्र में पानी की कमी आने से पर्वतीय क्षेत्र के मुकाबले दिल्ली ही पहले झुलसेगी, फिर भी भारत, नेपाल और चीन की सरकारें हिमालय की नदियों पर अपनी-अपनी राजनीति के अनुसार, डैम बनाने के लिए तत्पर है। एक तरफ कई विकसित देशों में डैमों की विफलता देखकर उन्हें तोड़ा जा रहा है लेकिन दूसरी और भारत की सरकार डैम-निर्माण के क्रेज से पीछे हटने को तैयार नहीं है। किस मानवीय गलती से सरस्वती सूख गई- इस पर आज तक कोई शोध नहीं हुआ।

नदियों को टनेल बनाकर बहाना क्या विज्ञान सम्मत है? अगर सूर्य ऊर्जा से कैलिफोर्निया में लोहे के तवों को 12000 डिग्री सेंटीग्रेट पर लगाकर उसे भाप बनाया जा सकता है तो उससे घर-घर बिजली क्यों नहीं दी जा सकती? नदियों में जल-प्रवाह कम हो रहे हैं और गंगा सिकुड़ती जा रही है। नदियों के सूखने के क्या परिणाम होंगे। यह वज्रपात से कम नहीं होगा, और हम धीरे-धीरे उस ओर ही बढ़ रहे हैं। हिमालय में सड़कें और मकान भी वहां की भू-सरंचना और ढाल को देखकर नहीं बनाए जा रहे हैं। सड़कों के धंसने का क्रम वहां लगातार जारी है। हमारा दृष्टिकोण यही है कि कम से कम समय में वहाँ के संसाधनों का अधिकाधिक दोहन कर लिया जाए। हिमालय के संसाधनों का उपयोग इस तरह से होना चाहिए कि वह भावी पीढ़ी के लिए ही सुरक्षित रहे। इसका दोहन इस तरह से न हो कि अगले कुछ दशकों में ही हम करोड़ों लोगों के अस्तित्व पर ही खतरा पैदा कर दें।

हम आज भी यह मानने को तैयार नहीं हैं कि आधुनिक ज्ञान के भ्रम पर आधारित आधुनिक विकास ने पूरी प्रकृति को ही खतरे में डाल दिया है। अभी तक यह समझ नहीं बन सकी है कि हिमालय के बर्बाद होने से हम सभी बर्बाद हो जाएंगे। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हिमालय हमारा प्राकृतिक प्रहरी भी है।

vijankumarpandey@gmail.com

एंटीबॉयोटिक दवाओं की हीरक जयंती

# 75 साल की हुई एंटीबॉयोटिक दवाएं

प्रमोद भार्गव

एंटीबॉयोटिक दवाओं को लेकर अर्से से जताई जा रही चिंता भले ही गंभीर रूप लेती जा रही हो, लेकिन हकीकत यह है कि तमाम बीमारियों का रामबाण इलाज आज भी इन्हीं दवाओं से संभव हो पा रहा है। 75 साल पहले इन दवाओं का उत्पादन शुरू हुआ था। प्लेग जैसी महामारी से इन्हीं दवाओं ने छुटकारा दिलाया। 1340 में यूरोप में ढाई करोड़ से भी ज्यादा लोग प्लेग की चपेट में आकर मरे थे। किंतु अब यह महामारी लगभग पूरी तरह खत्म हो चुकी है। हकीकत यह भी है कि मलेरिया जैसी घातक और विश्वव्यापी बीमारी पर नियंत्रण इन्हीं एंटीबॉयोटिक दवाओं से है। बावजूद इन दवाओं को इसलिए दुष्प्रचारित इसलिए किया जाता है, क्योंकि कभी-कभी ये शरीर में एलर्जी व अन्य नई बीमारियों को पैदा करने का सबब बन जाती है। इसी कारण यह आशंका उत्पन्न हो रही है कि ये दवाएं अपनी हीरक जयंती तो मना लेंगी, लेकिन शताब्दी समारोह मना पाएंगी अथवा नहीं? दरअसल आसानी से उपलब्ध होने और नीम-हकीम द्वारा रोग की ठीक से पहचान नहीं किए जाने के बाबजूद ये दवाएं रोगी को जरूरत से ज्यादा खिलाईं जा रही है। इस कारण ये दवा-दुकानों के अलावा गाँव की परचून दुकानों पर भी मिल जाती है। लिहाजा शरीर में जो जीवाणु व विषाणु मौजूद हैं, वे इन दवाओं के विरुद्ध अपना प्रतिरोधी तंत्र विकसित करने में सफल हो रहे हैं। नतीजतन ये दवाएं रोग पर बेअसर भी साबित हो रही है। इसीलिए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपनी एक रिपोर्ट में एंटीबायोटिक दवाओं के विरूद्ध पैदा हो रही प्रतिरोधत्मक क्षमता को मानव स्वास्थ के लिए वैश्विक खतरे की संज्ञा दी है। इस रिपोर्ट से साफ हुआ है कि चिकित्सा विज्ञान के नए-नए आविष्कार और उपचार के अत्याधुनिक तरीके भी इंसान को खतरनाक बीमारियों से छुटकारा नहीं दिला पा रहे हैं। चिंता की बात यह है कि जिन महामारियों के दुनिया से समाप्त होने का दावा किया गया था, वे फिर आक्रामक हो रही है। तय है, मानव जीवन के लिए हानिकारक जिन सूक्ष्म जीवों को नष्ट करने की दवाएं ईजाद की गई थीं, वे स्थाई तौर से रोगनाशक साबित नहीं हुई।

डब्ल्यूएचओ ने 114 देशों से जुटाए गए आकड़ों का विश्लेषण करते हुए रिपोर्ट में कहा है कि यह प्रतिरोधक क्षमता दुनिया के हर कोने में दिख रही है। रिपोर्ट में एक ऐसे पोस्ट एंटीबायोटिक युग की आशंका जताई गई है, जिसमें लोगों के सामने फिर उन्हीं सामान्य संक्रमणों के कारण मौत का खतरा होगा, जिनका पिछले कई दशकों से इलाज संभव हो रहा है। यह रिपोर्ट मलेरिया, निमोनिया, डायरिया और रक्त संक्रमण का कारण बनने वाले सात अलग-अलग जीवाणुओं पर केंद्रित है। रिपोर्ट के अनुसार अध्ययन में शामिल आधे से ज्यादा लोगों पर दो प्रमुख एंटीबायोटिक का प्रभाव नहीं पड़ा। स्वाभाविक तौर पर जीवाणु धीरे-धीरे एंटीबायोटिक के विरूद्ध अपने अंदर प्रतिरक्षा क्षमता पैदा कर लेता है, लेकिन इन दवाओं के हो रहे अंधाधुंध प्रयोग से यह स्थिति अनुमान से कहीं ज्यादा तेजी से सामने आ रही है। चिकित्सकों द्वारा इन दवाओं की सलाह देना और मरीज की ओर से दवा की पूरी मात्रा न लेना भी इसकी प्रमुख वजह है। डॉ. फुकुदा का मानना है कि जब तक हम संक्रमण रोकने के बेहतर प्रबंधन के साथ एंटीबायोटिक के निर्माण, निर्धारण और प्रयोग की प्रक्रिया को नहीं बदलेंगे,यह खतरा बना रहेगा।

*प्रमोद भार्गव एक पत्रकार और विज्ञान संचारक के रूप में देशभर में जाने जाते हैं वहीं उनका दूसरा पक्ष एक लोकप्रिय कथाकार का भी है। समकालीन परिदृश्य और समसामयिक विषयों जिनमें विज्ञान भी शामिल है, पर प्रमोद भार्गव की गहरी नज़र रहती है। वे तात्कालिक विज्ञान-अनुसंधान और हलचल पर लिखने के लिये खासे चर्चित हैं। प्रमोद भार्गव म.प्र. के शिवपुरी में निवास करते हैं।*

वैज्ञानिकों ने एंटीबायोटिक दवाओं की खोज करके महामरियों में पर एक तरह से विजय-पताका फहरा दी थी। लेकिन चिकित्सकों ने इन दवाओं का इतना ज्यादा प्रयोग किया कि बीमारी फैलाने वाले सूक्ष्मजीवों ने प्रतिरोधात्मक दवाओं के विपरीत ही प्रतिरोधात्मक शक्ति हासिल कर ली। मसलन तुम डाल-डाल तो हम पात-पात। मानव काया में सूक्ष्मजीव भरे पड़े हैं। हालांकि सभी सूक्ष्मजीव हानिकारक नहीं होते, कुछ पाचन क्रिया के लिए लाभदायी भी होते हैं। प्राकृतिक रूप से हमारे शरीर में 200 किस्म के ऐसे सूक्ष्मजीव डेरा डाले हुए हैं,जो हमारे प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत व शरीर को निरोगी बनाए रखने का काम करते हैं। लेकिल ज्यादा मात्रा में खाई जाने वाली एंटीबायोटिक दवाएं इन्हें नष्ट करने का काम करती हैं।

एंटीबायोटिक दवाओं की खोज मनुष्य जाति के लिए ईश्वरीय वरदान साबित हुई थी। क्योंकि इनसे अनेक संक्रामक रोगों से छुटकारा मिलने की उम्मीद बंधी थी। मगर जैसे ही संक्रामक रोगों से लड़ने के लिए एंटीबायोटिक दवाओं का इस्तेमाल शुरू हुआ, वैज्ञानिकों ने पाया कि पुराने सूक्ष्मजीवों ने अपना रूपांतरण कर लिया है। यानी पेंसिलीन की खोज एक क्रांतिकारी खोज थी, किंतु वैज्ञानिकों ने देखा कि कुछ ऐसे सूक्ष्मजीव सामने आए हैं, जिन पर पेंसिलीन भी बेअसर है। सूक्ष्मजीव इतने सूक्ष्म होते हैं कि इन्हें केवल सूक्ष्मदर्शी यंत्र से ही देखा जा सकता है।

जीवाणु और विषाणु सूक्ष्मजीवों के ही प्रकार हैं, जो किसा भी कोशिका में पहुंचकर शरीर को नुकसान पहुंचाना शुरू कर देते हैं। ये हमारी त्वचा, मुंह, नाक और कान के जरिए शरीर में प्रवेश करते हैं। फिर एक से दूसरे व्यक्ति में फैलने लगते हैं। इसीलिए अब चिकित्सक सलाह देने लगे हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के बीच एक हाथ की दूरी बनी रहनी चाहिए। किसी का जूठा नहीं खाना-पीना चाहिए। वैसे हमारी त्वचा सूक्षम जीवों को रोकने का काम करती है और जो शरीर में घुस भी जाते है,उन्हें एंटीबायोटिक मार डालते हैं। एक समय तक संक्रात्मक रोगों को फैलने में एंटीबायोटिक दवाओं ने अंकुश लगा रखा था। इसके पहले खासतौर से भारत समेत अन्य एशियाई देशों के अस्पताल संक्रामक रोगियों से भरे रहते थे और चिकीत्सक मरीजों को बचा नहीं पाते थे। निमोनिया और डायरिया के रोगियों को भी बचाना मुश्किल था। चोट लगने पर टिटनेस और सेप्सिस की चपेट में आए मरीजों की मौत तो निश्चित थी।

1940 से 1980 के बीच बड़ी मात्रा में असरकारी एंटिबायटिकों की खोज हुई, नतीजतन स्वास्थ्य लाभ के क्षेत्र में क्रंतिकारी परिवर्तन हुए। किंतु 1980 के बाद कोई बड़ी खोज नहीं हुई, जबकि पूरी दुनिया में इस दौरान चिकित्सा शिक्षा संस्थागत ढांचे के रूप में ढल चुकी थी। आविष्कार में उपयोगी माने जाने वाले उपकरण भी शोध संस्थानों में आसानी से उपलब्ध हैं। 1990 में एक नई किस्म की एंटीबायोटिक की खोज जरूर हुई, मगर बजार में जो भी नई दवाएं आई,वे हकीकत में पुरानी दवाओं के ही नए संस्करण थे। विडंबना है कि नई एंटीबायोटिक दवाएं विकसित नहीं हो रही हैं, जबकि ताकतवार नए-नए सूक्ष्मजीव सामने आ रहे हैं। इन सूक्ष्मजीवों ने मौजूद दवाओं की सीमाएं चिन्हित कर दी हैं। जाहिर है इस पृष्ठभूमि में संक्रामक रोगों का खतरा बढ़ रहा है। हाल ही में अस्तित्व में आया सुपरबग एक ऐसा ही सूक्ष्म जीव है। इस मामले में एक दूसरी समस्या यह भी मिर्मित हुई है कि नई एंटीबॉयोटिक खोजने का काम मंदा पड़ गया है। दरअसल किसी भी एंटीबॉयोटिक का आविष्कार करने और फिर उसे परीक्षणों के बाद बाजार में लाने में दो दशक से भी ज्यादा का समय लगता है। इसमें निवेश भी अधिक होता है, इस कारण कंपनी को दवा के दाम महंगे रखने पड़ते है। इधर जनता की जागरूकता बढ़ने और सामाजिक कार्यकताओं की फौज खड़ी हो जाने से ड्रग ट्रायल करना भी मुश्किल हो गया है। क्योंकि अधिकांश कंपनियां और चिकित्सक ड्रग ट्रायल की शर्ते पूरी नहीं करते, नतीजतन इन्हें अदालत के कठघरे में खड़ा करना आसान हो जाता है। कुछ साल पहले इंदौर के सरकारी अस्पताल में गोपनीय ढंग से किए जा रहे ड्रग ट्रायल का बड़ा मामला सर्वोच्च न्यायालय के दखल से सामने आया था।

प्रकृति ने मनुष्य को बीमारियों से बचाव के लिए शरीर के भीतर ही मजबूत प्रतिरक्षात्मक तंत्र दिया है। इन्हें श्वेत एवं लाल रक्त कणिकाओं के माध्यम से जाना जाता है। इसके अलावा रोग-रोधी एंजाइम लाइफोजाइम भी होता है, जो जीवाणुओं को नष्ट कर देता है। एंटीबायोटिक दवाओं ने जहां अनेक संक्रामक रोगों से मानव जाति को बचाया,वहीं दुष्परिणामस्वरूप शरीर की प्रतिरोधात्मक शक्ति को कमजोर भी किया। जिस तरह मानव शरीर विभिन्न प्राकृतिक तापमान, वायुमंडल व भौगोलिक परिस्थिति और पर्यावरण के अनुकूल अपने को ढाल लेता है, उसी तरह से हमारे धरती पर अस्तित्व के समय से ही सूक्ष्मजीव और उनके विरूद्ध शरीर की प्राकृतिक प्रतिरोधात्मक शक्ति का भी परिवर्तित विकास होता रहा है। कुदरत का कमाल देखिए एंटिबायोटिक दवाओं ने दोनों के बीच के संतुलन को गड़बड़ा दिया, लिहाजा एंटीबायोटिक दवाएं जब-जब सूक्ष्मजीवों पर मारक साबित हुई, तब-तब जीवाणु और विषाणुओं ने अपने को ओर ज्यादा शक्तिशाली बना लिया। गोया, महाजीवाणु कभी न नष्ट होने वाले रक्तबीजों की श्रेणी में आ गए हैं। इसलिए आज वैज्ञानिकों को कहना पड़ रहा है कि एंटीबायोटिक दवाओं की मात्रा पर अंकुश लगना चाहिए। दवा कंपनियों की मुनाफे की हवस और चिकित्सकों का बढ़ता लालच, इसमें बाधा बने हुए हैं। चिकित्सक सर्दी-जुकाम और पेट के साधारण रोगों तक के लिए बड़ी मात्रा में एंटीबायोटिक दवाएं दे देते हैं। ऐलोपैथी चिकित्सा पद्धति के मुनाफाखोरों ने प्रायोजित शोधों के मार्फत आयुर्वेद, यूनानी, प्राकृतिक चिकित्सा और होम्योपैथी को अवैज्ञानिक कहकर हाशिए पर डालने का काम भी भाड़यंत्रपूर्वक किया है। लेकिन सूक्ष्मजीव नए-नए कायातंरण कर नए-नए रूपों में सामने आना शुरू हो गए हैं, तब से एंटीबायोटिक दवाओं की सीमा रेखांकित की जाने लगी है। नतीजतन वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियां फिर से जोर पकड़ रही हैं। बेशुमार एंटीबायोटिक दवाओं की मार से बचने का यही एक कारगर उपाय है कि वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों को लोग अपनाएं। हालांकि फिलहाल एंटीबॉयोटिक दवाओं का कोई ठोस विकल्प नहीं दिख रहा है, इसलिए यह आशंका निर्मूल साबित होगी कि ये दवाएं अपना शताब्दी समारोह मनाने से पहले बहिष्कृत हो जाएंगी।

pramod.bhargava15@gmail.com

# मिट्टी के स्वास्थ्य से जुड़ा है हमारा स्वास्थ्य

सुभाष चंद्र लखेड़ा

*रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान (डिपास), डीआरडीओ से वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद से सेवानिवृत सुभाष चंद्र लखेड़ा लोकप्रिय विज्ञान लेखक और बेबाक वक्ता हैं। डिजिटल मंचों पर वे पिछले कुछ वर्षों से अपने यात्रा संस्मरणों को समय-समय पर लिखते रहे हैं। ये संस्मरण वैज्ञानिक आधार पर इतने खरे उतरते हैं कि पाठकों ने इसे एक नई विधा का स्वरूप मान लिया। सुभाष चंद्र लखेड़ा हार्डकोर विज्ञान संबंधी शोध के समानान्तर आम जन को विज्ञान की गूढ़ बातें सरल भाषा में साझा करते आये हैं। आप दिल्ली में रहते हैं।*

पोषण के हिसाब से पौधों और प्राणियों के लिए कुछ तत्व अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यूनिवर्सिटी ऑफ ब्रिस्टल एग्रीकल्चरल एंड हॉर्टिकल्चर रिसर्च स्टेशन के वैज्ञानिक थॉमस वालेस ने बीसवीं सदी के पांचवे दशक के दौरान इन तत्वों को तीन समूहों में बांटा है: प्रथम समूह में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, नाइट्रोजन, सल्फर, कैल्शियम, एवं लौह हैं। मैग्नीशियम, बोरॉन, मैंगनीज़, ताम्र (कॉपर), जस्ता, मोलिब्डेनम को द्वितीय समूह में रखा गया है। तीसरे समूह में वैनेडियम, क्लोरीन, सोडियम, कोबाल्ट, सिलिकॉन, सेलेनियम, क्रोमियम और आयोडीन हैं। वालेस के अनुसार 'टिन' भी प्राणियों और पौधों के पोषण के लिए आवश्यक तत्वों की सूची में जोड़ा जाना चाहिए। इस प्रकार प्राणियों और वनस्पतियों के लिए टिन सहित चौबीस तत्व बेहद जरूरी हैं।

जहाँ तक वनस्पतियों का सवाल है, पेड़-पौधों को हाइड्रोजन, कार्बन, और ऑक्सीजन वायु और जल से प्राप्त हो जाते हैं। शेष तत्वों को वे मिट्टी तथा उर्वरकों से प्राप्त करते हैं। पौधों की कुछ ऐसी जातियां भी होती हैं जिन्हें उपरोक्त सभी तत्वों में से कुछ की जरूरत नहीं होती है। साथ ही कुछ किस्म के पेड़-पौधों को किन्हीं दूसरे तत्वों की भी जरूरत होती है। कभी-कभी पेड़-पौधों में ऐसे तत्व भी मिलते हैं जिनकी यूं तो उनको कोई जरूरत नहीं होती है किंतु मिट्टी में मौजूद होने की वजह से वे उसमें उगने वाले पौधों में पहुँच जाते हैं। दरअसल, पौधों को मिलने वाले तत्वों की संख्या और मात्रा स्थान विशेष की मिट्टी की रासायनिक संघटन पर निर्भर करती है।

सामान्यतया एक घन मीटर मिट्टी में लगभग 1000 किलोग्राम सिलिका, 140 किलोग्राम ऐल्युमिना, 40 किलोग्राम लौह, 22 किलोग्राम पोटैशियम, 10 किलोग्राम कैल्शियम, 8 किलोग्राम मैग्नीशियम, और लगभग 2 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा नाइट्रोजन होते हैं। शेष तत्वों का भार लगभग 16 किलोग्राम होता है। इनके अलावा उपजाऊ मिट्टी में प्रतिघन मीटर 32 किलोग्राम के लगभग मृत्य और जीवित कार्बनिक पदार्थ होते हैं। इन कार्बनिक पदार्थों की वजह से ही मिट्टी को वह 'बोने योग्य' संरचना प्राप्त होती है जो अधिकतम उर्वरता (उपजाऊपन) के लिए आवश्यक है और जो मिट्टी में पानी की अधिकतम पैठ को सरल बनाती है। ये कार्बनिक पदार्थ मिट्टी की 'कटाव और भूक्षरण' से भी रक्षा करते हैं। साथ ही मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीव उसमें मौजूद कार्बनिक पदार्थों को ऐसे अकार्बनिक यौगिकों में बदलते रहते हैं जिनकी उसमें उगने वाले पौधों को जरूरत होती है।

बहरहाल, मूल शैल उपादानों (पथरीले घटकों) के रासायनिक संघटन, जलवायु और वनस्पतियों (इन तीन का मिट्टी के निर्माण से मुख्य संबंध है) की विविधता के कारण अलग-अलग क्षेत्रों की रासायनिक बनावट में व्यापक अंतर पाया जाता है। यही कारण है कि ऊपर दिए औसत आंकड़ों से विभिन्न क्षेत्रों की मिट्टी में विभिन्न तत्वों की वास्तविक मात्रा के विषय में कोई लाभदायक जानकारी नहीं मिल पाती है।

बहरहाल, मिट्टी की किस्म तथा स्थान विशेष की जलवायु का पौधों की संरचना पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। फलस्वरूप, मिट्टी में मौजूद तत्वों के बीच का कोई भी अंतर उसमें उगने वाले पौधों के स्वरुप में स्पष्ट रूप से नजर आता है।

प्रत्येक किस्म के पौधों में तत्व विशेष के अभाव के कारण कुछ खास किस्म के ऐसे लक्षण विकसित होते हैं जिन्हें वनस्पति क्रिया विज्ञानी एवं वनस्पति रोग विज्ञानी आसानी से पहचान सकते हैं। साधारणतः पौधों की पत्तियों में अपवर्णन, उनमें रेखावर्ण धारियों की मौजूदगी अथवा गुलाबवत् छोटी पत्तियों का होना आदि कुछ लक्षण मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी की तरफ इशारा करते हैं। मिट्टी की कुछ किस्मों में कोबाल्ट, ताम्र, फॉस्फोरस तथा आयोडीन यथेष्ट मात्रा में नहीं होते। ऐसी अभाव ग्रस्त मिट्टी में अधिक पौष्टिक जातियों के पौधों के पैदा होने की संभावनाएं कम होती हैं और ऐसी मिट्टी में उगाए हुए पौधे अधिक उपजाऊ (तत्वों से युक्त) मिट्टी में उगाए हुए पौधों की अपेक्षा कम 'पौष्टिक' भी होते हैं।

**बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कृषि वैज्ञानिकों ने तब तक प्रचलित उर्वरक कार्यक्रम में सुधार करते हुए मिट्टी में कुछ तत्वों की कमी को दूर करने के लिए कीलेट यौगिकों का उपयोग करना शुरू किया। दरअसल, कीलेट वलयों में मौजूद धातु तत्व अपनी धनायन सक्रियता खो देते हैं। फलस्वरूप, उनकी ऐसी रासायनिक क्रियाओं में भाग लेने की संभावना क्षीण हो जाती है जो उनको पौधों के लिए अनुपयोगी बनाती हैं। उदाहरण के लिए लौह तत्व (आयरन) अपने मूल रूप में मिट्टी में तीव्रता से बंधित (स्थिरीकृत) हो जाता है। फलस्वरूप, मिट्टी में लौह तत्व की कमी हो जाती है। मिट्टी में हुए ऐसे 'लौह अभाव' कौ लोह कीलेटों के उपयोग से आसानी से दूर किया जा सकता है। इसी प्रकार मिट्टी में जिंक (जस्ता) अभाव को जिंक कीलेटों के इस्तेमाल से दूर किया जा सकता है।**

सन् 1830 में जर्मन रसायन विज्ञानी जुस्टुस लीबिग ने सर्वप्रथम पौधों की राख का रासायनिक विश्लेषण किया। ऐसे विश्लेषणों में पाए गए तत्वों की मात्रा तथा जिस मिट्टी में वे पौधे उगाए गए थे, उसमें उन तत्वों की मात्रा के बीच सहसंबंधों का पता लगाया। मिट्टी एवं उर्वरकों से पौधे प्राथमिक पोषक (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम), द्वितीयक पोषक (कैल्शियम, मैग्नीशियम, गंधक) एवं विरल तत्व (लौह, जस्ता, मैंगनीज़, बोरॉन, तांबा, सेलेनियम, मोलिब्डेनम, क्लोरीन आदि) प्राप्त करते हैं।

हर प्रकार से उपयुक्त मिट्टी भी 'पूर्ण पोषण' के लिए जरूरी किसी एक तत्व के अभाव के कारण 'अनुपजाऊ' साबित हो सकती है। किसी एक ऐसे तत्व की कमी को उसे मिट्टी में मिलाकर अथवा उस मिट्टी में उगाई जा रही फसल पर उस तत्व का छिड़काव करके दूर किया जा सकता है। यह जरूरी नहीं है कि प्रत्येक 'आवश्यक तत्व' पौधों को अधिक मात्रा में ही चाहिए। अक्सर अधिकांश आवश्यक तत्व पौधों को इतनी कम मात्रा में चाहिए होते हैं कि उनका छिड़काव कर देने से काम चल जाता है।

सन् 1850 के आसपास ज्ञात हुआ कि खेती की पैदावार को अमोनियम सल्फेट और सोडियम नाइट्रेट जैसे नाइट्रोजन युक्त अकार्बनिक लवणों (फॉस्फेट एवं पोटाश के साथ) के उपयोग से बढ़ाया जा सकता है। दरअसल, सन् 1850 में चर्चित 'एन.पी.के. (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम)' वाला सिद्धांत स्थापित हो गया था। खैर, कुछ वर्षों बाद ज्ञात हुआ कि 'एन पी के' सिद्धांत काफी सरल है और मिट्टी की उर्वरता से जुड़े सभी पहलुओं को महज इससे सुलझाना संभव नहीं क्योंकि प्राणियों और वनस्पतियों के संपूर्ण पोषण के लिए इनके अलावा अन्य दूसरे तत्वों की मिट्टी में मौजूदगी जरूरी है। यह अलग बात है कि इनमें से कुछ की जरूरत अत्यधिक अल्प मात्रा में होती है।

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कृषि वैज्ञानिकों ने तब तक प्रचलित उर्वरक कार्यक्रम में सुधार करते हुए मिट्टी में कुछ तत्वों की कमी को दूर करने के लिए कीलेट यौगिकों का उपयोग करना शुरू किया। दरअसल, कीलेट वलयों में मौजूद धातु तत्व अपनी धनायन सक्रियता खो देते हैं। फलस्वरूप, उनकी ऐसी रासायनिक क्रियाओं में भाग लेने की संभावना क्षीण हो जाती है जो उनको पौधों के लिए अनुपयोगी बनाती हैं। उदाहरण के लिए लौह तत्व (आयरन) अपने मूल रूप में मिट्टी में तीव्रता से बंधित (स्थिरीकृत) हो जाता है। फलस्वरूप, मिट्टी में लौह तत्व की कमी हो जाती है। मिट्टी में हुए ऐसे 'लौह अभाव' को लौह कीलेटों के उपयोग से आसानी से दूर किया जा सकता है। इसी प्रकार मिट्टी में जिंक (जस्ता) अभाव को जिंक कीलेटों के इस्तेमाल से दूर किया जा सकता है।

उर्वरक के रूप में संश्लेषित रसायनों और कीलेट यौगिकों के इस्तेमाल से जब पर्यावरण संबंधी चुनौतियां पैदा होनी लगी तो इधर पिछले कुछ वर्षों से वैज्ञानिकों ने कृषि कार्यों और विशेष रूप से बागवानी में मिट्टी में मौजूद सूक्ष्म तत्वों के अभाव को दूर करने के लिए अमीनोकीलेट यौगिकों का उपयोग शुरू किया। ये यौगिक अपेक्षाकृत अधिक पर्यावरण सम्मत पाए गए हैं।

बहरहाल, इस लेख में अब ऐसे कुछ तत्वों के विषय में जानकारी दी जा रही है जो प्राणियों और पौधों, दोनों के पोषण के लिए जरूरी हैं :

**नाइट्रोजनः** मिट्टी में सामान्यतया प्राकृतिक अवस्था में मौजूद नाइट्रोजन की मात्रा उसमें मौजूद 'कार्बनिक पदार्थों' के समानुपाती होती है। कार्बनिक पदार्थों में नाइट्रोजन भार के हिसाब से लगभग पाँच प्रतिशत होती है। मिट्टी को पौधों के पोषण के लिए जरूरी नाइट्रोजन कार्बनिक पदार्थों

के अपघटन से मिलती है। कार्बनिक यौगिकों में नाइट्रोजन मुख्यतया प्रोटीन में होती है। सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा जब ऐसे यौगिकों का अपघटन होता है तो नाइट्रोजन अमोनिया के रूप में मुक्त होती है। पौधों के द्वारा उपयोग न किए जाने पर मिट्टी में मौजूद सूक्ष्म जीवाणु इसे नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते हैं।

पौधों की सभी जीवित कोशिकाओं में नाइट्रोजन होती है। पर्णहरित (क्लोरोफिल) के प्रत्येक अणु में इसके चार परमाणु होते हैं। नाइट्रोजन प्राणियों और पौधों में जीवद्रव्य (प्रोटोप्लाज्म), प्रोटीनों, ऐल्केलायडों, अमाइडों और अमीनो अम्लों का एक प्रमुख घटक है। पौधों की वृद्धि और उपज के लिए नाइट्रोजन एक प्रमुख तत्व है। यदि कृत्रिम और संश्लेषित नाइट्रोजन उर्वरकों का इस्तेमाल न करना हो तो कार्बनिक पदार्थों का खाद के रूप में यथेष्ट मात्रा में उपयोग किया जाना चाहिए। चूंकि प्रत्येक उगाई गई फसल मिट्टी से सबसे अधिक इसी तत्व को लेती है, बीच-बीच में 'फली फसल' की खेती करना जरूरी है। फली फसल मिट्टी में 'नाइट्रोजन अभाव' की स्थिति पैदा नहीं होने देती है।

भूक्षरण अथवा मिट्टी के बहाव के कारण जमीन में नाइट्रोजन की कमी हो जाती है। इसके अलावा रेतीली मिट्टी, अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों की मिट्टी तथा कार्बनिक पदार्थों की कमी वाली मिट्टी में भी 'नाइट्रोजन न्यूनता' होती है। यूं जमीन की सतह पर प्रति वर्ग मीटर 192 किलोग्राम वायुमंडलीय नाइट्रोजन होती है किन्तु पौधे इसका उपयोग तभी कर सकते हैं जब यह ऑक्सीजन या हाइड्रोजन से संयुक्त होकर नाइट्रेट या अमोनियम आयनों के रूप में उपलब्ध हो। मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा नाइट्रोजन को स्थिरीकृत किया जाता है। मृदा (मिट्टी) वैज्ञानिकों के अनुसार जमीन में प्रति वर्ष वर्षा के पानी के साथ पहुँचने वाली नाइट्रोजन की मात्रा प्रति एकड़ 2-3 किलोग्राम होती है। इसके अलावा जमीन के एक एकड़ को 21 किलोग्राम नाइट्रोजन अपने असहजीवी सूक्ष्म जीवाणुओं और 36 किलोग्राम शिंब सहजीवी जीवाणुओं से प्राप्त होती है। नाइट्रोजन उर्वरक पौधों में 'जीवद्रव्य' की वृद्धि करते हैं और उन्हें सरस बनाते हैं। यद्यपि प्रचुर मात्रा में नाइट्रोजन ग्रहण करने के कारण पौधों द्वारा बनाए जाने वाले अनाज की प्रोटीन धारिता बढ़ जाती है किंतु साथ ही इसका एक दूसरा पक्ष भी है। ऐसे पौधों की तीव्र गति से होने वाली वृद्धि के कारण उनके अनाज में खनिजों की प्रतिशतता कम हो जाती है।

**फॉस्फोरस** : यह तत्व जीवित कोशिकाओं, उनके विभाजन तथा आनुवंशिकता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दरअसल, फॉस्फोरस उच्च ऊर्जाधारी यौगिकों एडीनोसिन ट्राइफॉस्फेट और एडीनोसिन डाइफॉस्फेट का महत्वपूर्ण घटक है। प्राणियों के शरीर में जहाँ इसके कार्य किसी भी दूसरे खनिज पोषाहार से कहीं अधिक है, इसकी क्रांतिक अथवा अनुकूल सांद्रता में हुई थोड़ी सी कमी से भी सामान्य विकास की प्रक्रिया रुक जाती है। शरीर में यह कंकाल वृद्धि, दंत वृद्धि, रक्त रसायन और अम्ल-क्षार संतुलन से ताल्लुक रखता है। इसका संबंध विटामिनों और प्रकिण्वों (एंज़ाइमों) की सक्रियता से भी है। साधारणतया फॉस्फोरस की सांद्रता पौधों के बीजों में अधिक होती है। मक्का के दानों में उसकी पत्तियों की तुलना में तीन गुना फॉस्फोरस होता है। सोयाबीन के बीजों में उसकी पत्तियों से दुगना फॉस्फोरस होता है। टमाटर के फल में बीजों की अधिकता के कारण फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में होता है।

**पोटैशियम** : जब मिट्टी में यह तत्व यथेष्ट मात्रा में नहीं होता तो इसके अभाव का कुप्रभाव सीधे पैदावार पर पड़ता है। कुछ फसलों विशेषकर फलों एवं सब्जियों में तो गुणात्मक गिरावट भी आ जाती है। प्राणियों के शरीर में होने वाली चयापचयिक (मेटाबोलिक) रासायनिक क्रियाओं में पोटैशियम महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। तंत्रिका आवेगों के संचरण से जुड़ी जीवविद्युत् धारा (बायो इलेक्ट्रिक करंट) के उत्पादन में पोटैशियम विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। चूंकि मनुष्य सहित सभी प्राणी मुख्यतः पोटैशियम को पौधों और उनके उत्पादों से प्राप्त करते हैं, इस तत्व का मिट्टी में यथेष्ट मात्रा में होना जरूरी है।

**कैल्शियम** : कम कैल्शियम वाली मिट्टी में उगने वाले पौधों में मनुष्यों और जानवरों के 'उचित पोषाहार' के लिए पर्याप्त कैल्शियम नहीं होता है। यूं ऐसी मिट्टी में वे पौधे ही ठीक तरह से उगते हैं जिन्हें कैल्शियम की कम आवश्यकता होती है। मनुष्यों और जानवरों के लिए इस तत्व का बहुत अधिक महत्व है। हमारे शरीर में किसी भी अन्य खनिज तत्व की अपेक्षा कैल्शियम प्रचुर मात्रा

**मैग्नीशियम की कमी के कारण दुधारू पशुओं और घोड़ो को 'टिटैनी' यानी 'ग्रास स्टैगर्स' नामक रोग हो जाता है। लक्षणों में अस्थिर चाल, पेशी स्फुरण और पूंछ की पेशी की अपतानिका (टिटैनी) प्रमुख हैं। ऐसे पशुओं का उपचार उन्हें मैग्नीशियम समृद्ध) आहार देकर किया जाता है। मनुष्यों में हृदयघात की रोकथाम के लिए मैग्नीशियम के यथेष्ट स्तर का बहुत अधिक महत्व है। मैग्नीशियम का अभाव होने पर शरीर में 'पोटैशियम अभाव' की स्थिति भी पैदा हो जाती है। पोटैशियम भी हृदय को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए एक आवश्यक तत्व है।**

में होता है। जहाँ तक हमारे शारीरिक स्वास्थ्य का सवाल है, कंकाल की अपेक्षा ऊतकों में मौजूद कैल्शियम की अल्प मात्रा विशेष महत्व रखती है। एक्स-किरण अध्ययनों से पता चला है कि किसी क्षेत्र की मिट्टी में कैल्शियम एवं फॉस्फेट के अभाव तथा उस क्षेत्र के निवासियों की शारीरिक विकृतियों के बीच घनिष्ठ संबंध होता है।

दरअसल, इसके दो कारण हैं। एक तो कम कैल्शियम वाली मिट्टी में पोषण के हिसाब से श्रेष्ठ फसलें या चारा उगाना संभव नहीं है। फलस्वरूप, ऐसे स्थानों पर या क्षेत्रों में कम पोषक किस्म की वे फसलें ही उगाई जाती हैं जिनके पौधे ऐसी मिट्टी में आसानी से उग पाते हैं। दूसरे, चूंकि इन क्षेत्रों के निवासी मिट्टी में कैल्शियम की कमी के कारण अपने खेतों से अच्छी फसल नहीं ले पाते हैं; वे गरीबी के दलदल में फंसे रहते हैं। उनके पास समुचित पोषाहार प्राप्त करने का कोई उपाय नहीं होता है।

बहरहाल, पौधों के विभिन्न हिस्सों में कैल्शियम की मात्रा में अंतर होता है। उदाहरण के लिए शलगम के मूल में भार के हिसाब से इस तत्व का प्रतिशत 0.05 होता है जबकि अर्धविकसित शलगम की पत्तियों में इसकी मात्रा भार के हिसाब से 2.85 होती है। इसी तरह यह चुकंदर मूल में 0.40 और उसकी विकसित पत्तियों में 1.60, आलू में 0.05, अंगूर में 4.10, बंदगोभी की अंदरूनी पीली पत्तियों में 0.08 किंतु बाहरी पत्तियों में 1.04 प्रतिशत (भार के हिसाब से) होता है।

**मैग्नीशियम** : पर्णहरित के प्रत्येक अणु में मैग्नीशियम का एक परमाणु होता है। मैग्नीशियम की अनुपस्थिति में कोई भी पौधा हरा नहीं रह सकता है और न ही प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिन्थेसिस) की क्रिया कर सकता है। पौधों को 'फॉस्फोरस' प्राप्त करवाने में भी यह तत्व सहायता करता है। ऐसी फसलों को जिनसे तेल प्राप्त किया जाता है, मैग्नीशियम पर्याप्त मात्रा में मिलना चाहिए। चूंकि कैल्शियम और पोटैशियम पौधों की मैग्नीशियम प्राप्त करने की क्षमता घटाते हैं, इनसे समृद्ध मिट्टी में मैग्नीशियम का उचित मात्रा में होना जरूरी है। ऐसे सभी क्षेत्रों में जहां की मिट्टी में मैग्नीशियम जरूरत से कम हो, कैल्शियम मैग्नीशियम कार्बोनेट उचित मात्रा में भूमि को दिया जाना जरूरी है। मैग्नीशियम की कमी के कारण दुधारू पशुओं और घोड़ों को 'टिटैनी' यानी 'ग्रास स्टैगर्स' नामक रोग हो जाता है। लक्षणों में अस्थिर चाल, पेशी स्फुरण और पूंछ की पेशी की अपतानिका (टिटैनी) प्रमुख हैं। ऐसे पशुओं का उपचार उन्हें मैग्नीशियम समृद्ध आहार देकर किया जाता है। मनुष्यों में हृदयाघात की रोकथाम के लिए मैग्नीशियम के यथेष्ट स्तर का बहुत अधिक महत्व है। मैग्नीशियम का अभाव होने पर शरीर में 'पोटैशियम अभाव' की स्थिति भी पैदा हो जाती है। पोटैशियम भी हृदय के सुचारू रूप से कार्य करने के लिए एक आवश्यक तत्व है। शोध से पता चला है कि शरीर में मैग्नीशियम की अत्यधिक कमी होने पर धमनियां सिकुड़ने लगती हैं।

कुल मिलाकर, मिट्टी में मैग्नीशियम का होना बेहद जरूरी है। यदि उर्वरकों के रूप में केवल ऐसे लवणों का उपयोग किया जाता रहे जिनमें मैग्नीशियम न हो तो ऐसी स्थिति में मिट्टी में मैग्नीशियम अभाव की स्थिति पैदा हो सकती है। फलस्वरूप, ऐसी मिट्टी से प्राप्त होने वाले कृषि उत्पादों में मैग्नीशियम की कमी होगी जिसका कुप्रभाव ऐसे उत्पादों का उपभोग करने वाले प्राणियों पर पड़ सकता है।

**गंधक** : मिट्टी में यदि गंधक (सल्फर) की मात्रा सामान्य से कम हो तो इससे पौधों की वृद्धि पर कुप्रभाव पड़ता है। मृदा वैज्ञानिकों के अनुसार मिट्टी में गंधक की कमी मुख्यतः चार कारणों से होती है- एकः गंधक रहित उर्वरकों के अधिक उपयोग से; दोः कीटनाशी अथवा फफूंदनाशी के रूप में गंधक रहित उर्वरकों के अधिक उपयोग से; तीनः वायुमंडल में गंधक यौगिकों की सांद्रता में अत्यधिक कमी आने से; चारः पैदावार में अन्य उपायों से की जाने वाली अत्यधिक वृद्धि से जिसकी वजह से मिट्टी में धीरे - धीरे कई आवश्यक पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। गंधक की आवश्यकता सिस्टीन तथा मेथियोनाइन जैसे गंधकधारी अमीनों अम्लों और प्रोटीन के संश्लेषण के

**नवजात शिशुओं में वयस्कों की अपेक्षा सेलेनियम और विटामिन-ई की मात्रा काफी कम होती है। यूं अपने जन्म के पहले महीने के दौरान माँ का दूध पीने वाले शिशुओं को उन शिशुओं की तुलना में कहीं अधिक विटामिन ई और सेलेनियम प्राप्त होता है जो माँ का दूध नहीं अपितु कोई ऊपरी दूध पीते हैं। माँ का दूध पीने वाले शिशुओं में दूसरे समूह के शिशुओं की तुलना में मृत्यु दर कम होने की वजह से वैज्ञानिक शरीर में सेलेनियम के स्तर को काफी महत्व देने लगे। पिछले कुछ दशकों के दौरान ज्ञात हुआ है कि सेलेनियम एक जबरदस्त एंटीऑक्सीडेंट है और कैंसर तथा दिल की बीमारियों से बचाव में सहायता करता है।**

लिए पड़ती है। इतना ही नहीं, यह तत्व कई विटामिनों, कोएन्ज़ाइम 'ए' और ग्लूटाथियोन का घटक है और पर्णहरित के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि गंधकधारी अमीनो अम्लों की कमी प्रोटीनों के पोषक मूल्यों को घटाती है। बहरहाल, गंधकयुक्त उर्वरकों के उपयोग से पौधों में इन अमीनो अम्लों की सांद्रता में वृद्धि की जा सकती है। कृषि वैज्ञानिकों के प्रयत्नों की वजह से अब भूमि के उर्वरीकरण में गंधक का उपयोग बढ़ता जा रहा है। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि पौधों की जड़ें गंधक को केवल सल्फेट आयन के रूप में ग्रहण करती हैं। यही वजह है कि जिप्सम ( कैल्शियम सल्फेट डाइहाइड्रेट ) का उपयोग दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। साथ ही अमोनियम पोलीसल्फाइड और अमोनियम थायोसल्फेट जैसे धुलनशील गंधक यौगिकों को भी द्रव उर्वरकों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

**नवजात शिशुओं में वयस्कों की अपेक्षा सेलेनियम और विटामिन-ई की मात्रा काफी कम हती है। यूं अपने जन्म के पहले महीने के दौरान माँ का दूध पीने वाले शिशुओं को उन शिशुओं की तुलना में कहीं अधिक विटामिन ई और सेलेनियम प्राप्त होता है जो माँ का दूध नहीं अपितु कोई ऊपरी दूध पीते हैं। माँ का दूध पीने वाले शिशुओं में दूसरे समूह के शिशुओं की तुलना में मृत्यु दर कम होने की वजह से वैज्ञानिक शरीर में सेलेनियम के स्तर को काफी महत्व देने लगे। पिछले कुछ दशकों के दौरान ज्ञात हुआ है कि सेलेनियम एक जबरदस्त एंटीऑक्सीडेंट है और कैंसर तथा दिल की बीमारियों से बचाव में सहायता करता है।**

**सेलेनियम** : रासायनिक दृष्टि से यह तत्व गंधक से मिलता-जुलता है। प्राणियों और पौधों के लिए एक विरल तत्व के रूप में इसका महत्व बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में स्थापित हुआ। यह तत्व पानी, पशु स्रोतों से प्राप्त आहार जैसे दूध, अंडा, मांस आदि तथा सब्जियों एवं अन्न के दानों में मनुष्य की जरूरत के हिसाब से पर्याप्त मात्रा में होता है। फसली पौधों की अपेक्षा कुछ प्राकृतिक पौधों में सेलेनियम को संचित करने की क्षमता कहीं अधिक होती है।

मनुष्य में सेलेनियम हृदयपेशियों तथा अन्य दूसरी पेशियों में होने वाली चयापचय की क्रियाओं में कोई भूमिका निभाता है, वैज्ञानिकों का ऐसा विचार है। 'सेलेनियम अभाव' चीन में कैशन बीमारी के नाम से जानी जाती है। यह बीमारी मुख्य रूप से बच्चों और संतानोत्पत्ति योग्य उम्र की महिलाओं को होती है। सेलेनियम अभाव के कारण होने वाली इस बीमारी के गंभीर मामलों में हृद्यपेशी को काफी नुकसान पहुँच सकता है जिसके कारण हृदय अपवृद्धि और हृद्यपात हो सकता है यानी बीमार व्यक्ति मौत के मुंह में पहुँच सकता है। यह बीमारी अधिकतर उन्हीं लोगों को होती है जो ऐसे क्षेत्रों में रहते हैं जहां की मिट्टी में सेलेनियम की कमी होती है। मिट्टी में सेलेनियम अभाव के कारण ऐसे क्षेत्रों में उगाए जाने वाले कृषि उत्पादों में भी सेलेनियम की कमी होती है। ऐसे कृषि उत्पादों को खाने वाले निवासियों के बालों में दूसरे सामान्य क्षेत्रों के निवासियों के बालों की तुलना में सेलेनियम की मात्रा काफी कम पाई गई है। बीसवीं सदी के नौवें दशक में जब सेलेनियम अभाव की तरफ वैज्ञानिकों का ध्यान गया तो पता चला कि कैंसर से भी इसका संबंध है। मानव रक्त में सेलेनियम स्तर और कैंसर से होने वाली मृत्यु दर में एक विलोम संबंध पाया गया है। सेलेनियम समृद्ध मिट्टी वाले क्षेत्रों के निवासियों में कैंसर के मामले अपेक्षाकृत कम देखने में आते हैं। क्षारीय मिट्टी पौधों की सेलेनियम को ग्रहण करने की क्षमता को बढ़ाती है। संभवतया यही वजह है कि जिन क्षेत्रों की मिट्टी अम्लीय होती है, वहां के निवासियों में कैंसर होने की संभावना अधिक मानी जाती है। नवजात शिशुओं में वयस्कों की अपेक्षा सेलेनियम और विटामिन-ई की मात्रा काफी कम होती है। यूं अपने जन्म के पहले महीने के दौरान माँ का दूध पीने वाले शिशुओं को उन शिशुओं की तुलना में कहीं अधिक विटामिन-ई और सेलेनियम प्राप्त होता है जो माँ का दूध नहीं अपितु कोई ऊपरी दूध पीते हैं। माँ का दूध पीने वाले शिशुओं में दूसरे समूह के शिशुओं की तुलना में मृत्यु दर कम होने की वजह से वैज्ञानिक शरीर में सेलेनियम के स्तर को काफी महत्व देने लगे। पिछले कुछ दशकों के दौरान ज्ञात हुआ है कि सेलेनियम एक जबरदस्त एंटीऑक्सीडेंट है और कैंसर तथा दिल की बीमारियों से बचाव में सहायता करता है। इसके संपूरक विकिरण उपचार के दौरान रोगियों के जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने में मदद दे सकते हैं। सेलेनियम समृद्ध आहार मानसिक क्षमता को बनाए रखने और अल्जाइमर रोग में याददाश्त में होने वाली हानि को कम करता है। यह थाइरॉयड ग्रंथि का 'ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस ' से बचाव करता है। यह प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है और कुछ अध्ययनों में दमा में भी लाभदायक पाया गया है।

**अणुपोष तत्व:** इस श्रेणी में जिंक ( जस्ता ), मैंगनीज़, ताम्र ( कॉपर ), मोलिब्डेनम और क्लोरीन आते हैं। यद्यपि पौधों को इन तत्वों की अत्यधिक अल्प मात्रा में आवश्यकता होती है, ये पौधों की वृद्धि और स्वास्थ्य के लिए अन्य दूसरे पोषक तत्वों जितने महत्वपूर्ण हैं।

अधिकांश अणुपोष तत्व तांबा, लौह, जिंक, मैंगनीज़, मोलिब्डेनम ' एंजाइम सिस्टम ' के महत्वपूर्ण घटक हैं और जैविक प्रणालियों को उत्प्रेरित करने का कार्य करते हैं। जीवन के लिए अत्यावश्यक बहुत से रासायनिक परिवर्तनों में इन तत्वों की भूमिकायें उल्लेखनीय हैं। तांबा और लौह ऊर्जा उत्पादन, लौह पर्णहरित के उत्पादन, जिंक ट्रिप्टोफेन नामक अमीनो अम्ल के उत्पादन, मोलिब्डेनम नाइट्रोजन के उपयोग तथा प्रोटीनों में इसका समावेश कराने, बोरॉन शर्करा के उपयोग एवं कुछ पौधों द्वारा पानी धारण और क्लोरीन प्रकाश सश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाते हैं।

यदि मिट्टी में इन आवश्यक तत्वों का अभाव हो तो उसे पशुओं से प्राप्त खाद के उपयोग से पूरा किया जा सकता है। पशुओं से प्राप्त खाद इन तत्वों का एक अच्छा स्रोत है। जिंक, लौह, मैंगनीज़ तथा तांबे की कमी को बीस से लेकर तीस टन प्रति एकड़ पशु - खाद का उपयोग करके दूर किया जा सकता है। पौधों और प्राणियों, विशेषकर मनुष्य पर इन तत्वों की कमी के कारण पड़ने वाले प्रभावों को यहां संक्षिप्त रूप में बताना उचित होगा। लौह, जिंक और मैंगनीज़ के विषय में यहां जानकारी दी जा रही है।

**लौह** : इस तत्व का अभाव अधिकतर चूनेदार मिट्टी वाली भूमि में पाया गया है। यूं इसका अभाव अम्लीय मिट्टी में भी हो सकता है। पौधों में लौह की कमी महज मिट्टी में लौह की कमी से ही नहीं, अन्य दूसरे कारणों से भी हो सकती है।यह मिट्टी में खनिजों के मध्य असंतुलन और अत्यधिक क्षारीयता आदि कई वजहों से हो सकती है। लौह अभाव को कारण विशेष को समझकर कई तरीकों से दूर किया जा सकता है। अकार्बनिक अथवा संश्लेषित कार्बनिक स्रोतों के द्वारा मिट्टी में पाई गई लौह की कमी को दूर किया जा सकता है। विशेष परिस्थितियों में फसलों पर लौह युक्त रसायनों का छिड़काव करके अथवा पेड़ों के तनों पर इंजेक्शन द्वारा लौह स्रोतों के उपयोग से इस अभाव को दूर किया जा सकता है।

यद्यपि प्राणियों के शरीर में लौह की मात्रा काफी कम होती है, इसका अभाव अनेक समस्याओं और रोगों को जन्म दे सकता है। लौह रक्ताल्पता के कारण मनुष्य जैसे प्राणी अनेक रोगों के चंगुल में फंस जाते हैं। शरीर में ऑक्सीजन के वितरण और कोशिकाओं में होने वाले पोषाहारों के चयापचय में इसका अत्यधिक महत्व है।

**जिंक** : चूनेदार और कार्बनिक मिट्टी में अक्सर इस तत्व की कमी देखने को मिलती है। फॉस्फोरस की अधिकता भी ' जिंक अभाव ' पैदा कर सकती है। मिट्टी का कम तापमान भी ' जिंक अभाव ' की संभावनाओं में वृद्धि के लिए उत्तरदायी पाया गया है। जिंक प्राणियों और पौधों, दोनों के लिए जरूरी तत्व है। एक वयस्क व्यक्ति के शरीर में लगभग 2.2 ग्राम जिंक होता है। थाइरॉयड ग्रंथि, यकृत और अग्न्याशय में इस तत्व की सांद्रता अपेक्षाकृत अधिक होती है। जिंक की कमी के प्रभावों को जानने के लिए किए प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि इस तत्व का अभाव होने पर प्राणियों की शारीरिक वृद्धि दर घट जाती है। उनका शरीर कमजोर होने लगता है और उनके सिर के बाल गिरने लगते हैं। जठर आंत्र पथ से कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन के अवशोषण की अवधि बढ़ जाती है तथा यकृत एवं वृक्कों की 'कैटेलेज एंजाइम की सक्रियता' काफी कम हो जाती है। यह एंजाइम ऑक्सिडेटिव क्षति को रोकने का कार्य करता है। कार्बोनिक एनहाइड्रेज नामक एंजाइम का जो कार्बोनिक अम्ल से पानी और कार्बन डाइऑक्साइड बनने की प्रक्रिया में उत्प्रेरक का कार्य करता है, जिंक एक अपरिहार्य घटक है। यह एंजाइम लाल रुधिर कणिकाओं और विभिन्न ऊतकों में मौजूद रहता है। सामान्य श्वसन प्रक्रिया के लिए इस एंजाइम की उपस्थिति बेहद जरूरी है।

**मैंगनीज़**: चूनेदार अथवा शुष्क उदासीन मिट्टी में बहुधा इस तत्व का अभाव पाया गया है। इसके अभाव का कुप्रभाव मुख्य रूप से छोटे दाने वाले अनाज की फसलों और बड़ी फलीदार पौधों पर पड़ता है। सब्जियों और कुछ फलों की फसलों पर भी इसके अभाव का असर पड़ता है। मिट्टी में मैंगनीज़ अभाव को दूर करने के लिए इस तत्व के लवणों का उर्वरक के रूप में उपयोग किया जा सकता है। यूं दूसरी तरफ यदि मैंगनीज़ सल्फेट के घोल का फसलों पर छिड़काव कर दिया जाए तो इससे बेहतर परिणाम मिलते हैं और काफी कम मैंगनीज़ लवणों की आवश्यकता पड़ती है।

'मैंगनीज़ अभाव' का प्राणियों की टांगों की हड्डियों पर कुप्रभाव पड़ता है। मैंगनीज़ विभिन्न एंजाइमों पर 'प्रबलीकरण प्रभाव' डालता है। चारे में मैंगनीज़ का भाग भार के हिसाब से यदि 'बीस भाग प्रति दस लाख' हो तो पशुओं के पोषण के लिए यह मात्रा उचित होगी। विषम परिस्थितियों के अलावा सामान्यतया मनुष्यों में 'मैंगनीज़ अभाव' की संभावनाएं नहीं के बराबर रहती हैं।

बहरहाल, इस लेख में कुल मिलाकर उन्हीं तत्वों की चर्चा की गई है जिनके अभाव को उर्वरकों का उपयोग करके अथवा इन तत्वों के लवणों का फसलों पर छिड़काव करके दूर किया जा सकता है। मिट्टी में किसी आवश्यक तत्व का अभाव उसमें उगने वाली फसलों को प्रभावित करता है। ऐसी फसलों से प्राप्त खाद्यान्नों, फलों और सब्जियों में चूंकि उस जरूरी 'तत्व विशेष' का अभाव रहता है, इस अभाव का कुप्रभाव उन्हें खाने वाले प्राणियों पर पड़ सकता है। प्राणियों को ऐसे संभावित कुप्रभावों से बचाने के लिए मिट्टी में उपरोक्त सभी आवश्यक तत्वों का अभाव दूर किया जाना चाहिए अथवा प्राणियों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले आहार में जिस जिस तत्व का अभाव हो, उनका समावेश किया जाना चाहिए। साथ ही विभिन्न कारणों की वजह से मिट्टी की घटती उर्वरता को रोकने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए। यह तथ्य चिंताजनक है कि हमारे देश की 54 प्रतिशत मिट्टी संश्लेषित उर्वरकों के अंधाधुंध इस्तेमाल और निर्वनीकरण जैसे कारणों से ख़राब हो चुकी है।

subhash.surendra@gmail.com

*13 सितम्बर 1931 में जन्में शिवगोपाल मिश्र एम.एस-सी, डी.फिल, साहित्य रत्न में शिक्षित डॉ. मिश्र विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद के प्रधानमंत्री हैं। वे शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक भी रहे। उन्होंने कई विज्ञान कोश व ग्रंथों की रचना की जिसमें हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकों सहित 5 पाठयपुस्तकें, नौ साहित्यिक पुस्तकें, महाकवि निराला पर तीन पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपको आत्माराम पुरस्कार, भारत भूषण सम्मान आदि से विभूषित किया गया है। विज्ञान को समझने-समझाने के लिए हिन्दी विज्ञान लेखन के क्रमिक विकास का विहंगावलोकन आवश्यक है। वस्तुतः ऐसी ही सोच के कारण हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान तथा भविष्य विषयक यह पुस्तक गम्भीरता से विचार करके रोचक तरीके से लिखी गई है।*

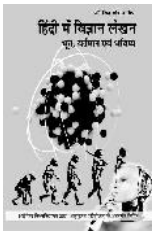

# पर्यावरण शिक्षा और विकास

डॉ.मनीष मोहन गोरे

मनीष मोहन गोरे विज्ञान प्रसार दिल्ली में वैज्ञानिक के पद पर कार्यरत हैं। वे विज्ञान लेखन के क्षेत्र में विज्ञान कथा और लेख दोनों ही लिखते रहे हैं किन्तु इधर के दो-तीन वर्षों में उन्होंने देशभर के वरिष्ठ विज्ञान लेखकों की साक्षात्कार-शृंखला तैयार की है। विज्ञान लेखन, विज्ञान संचार और विज्ञान जिज्ञासाओं को ध्यान में रखकर उन्होंने जिन वैज्ञानिकों से बातचीत की वह काफी चर्चा में रहे। हमें खुशी है कि 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में हम उन वार्ताओं को नियमित प्रकाशित कर सके हैं।

शिक्षा का हमारे जीवन में बेहद महत्व है। हमारा सोचने-समझने वाला दिमाग और यह शिक्षा ही दो ऐसी चीजें हैं जो पशु जगत से हमें अलग बनाती हैं। शिक्षा हमें सही और गलत का अंतर समझाती है तो दूसरी ओर मनुष्य जाति, पशु-पक्षियों और पर्यावरण से प्रेम करना भी सिखाती है।

अगर कहें कि शिक्षा ना हो तो मानव जीवन व्यर्थ है तो ऐसा कहना गलत नहीं होगा। मानव सभ्यता की शुरुआत में हमने अपने चारों ओर प्रकृति की मौजूदगी पाई। हमारा समूचा जीवन प्रकृति पर निर्भर था। चूंकि प्रकृति हमारी मां के समान है इसलिए हमारे पुरखे प्रकृति और पर्यावरण से कोई भी संसाधन उतनी ही मात्रा में लेते थे, जितने से प्रकृति को कोई नुकसान ना हो। लेकिन आज की स्थिति विपरीत है। विकास की सीढियां चढ़ते हुए मानवजाति लगातार पर्यावरण की अनदेखी कर रहा है। विकास की अंधी दौड़ में हमने प्रकृति के संसाधनों का केवल दोहन किया और उनके संरक्षण के बारे में कभी नहीं सोचा। हम भूल जाते हैं कि दीर्घकालिक और स्थायी विकास का रास्ता पर्यावरण को सहेजने के साथ बनता है। पर्यावरण को दरकिनार करके हम पृथ्वी को नष्ट तो करेंगे ही, अपने साथ निर्दोष जीव-जन्तुओं का अस्तित्व भी खतरे में डालेंगे।

## पर्यावरण शिक्षा: बेहद जरूरी

पर्यावरण दोहन के वर्तमान दौर में, पृथ्वी के पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए पर्यावरण शिक्षा का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। पर्यावरण शिक्षा का इतिहास पूरी दुनिया और हमारे देश में बहुत पुराना है। ऋग्वेद के ओसोधी सूक्त में पौधों और सब्जियों को मां स्वरूप माना गया है। ''सतान बु अंबा धमोनी सहस्त्रमुत्ता तु रूहाह..'' इसका अर्थ है कि ''हे मां! आपके सैकड़ों जन्म स्थान हैं और हजारों शाखाएं''। वैदिक जीवन दर्शन मनुष्यों को पर्यावरण के साथ तालमेल बैठाकर प्रकृति में रहने का संदेश देता है। ईशावास्योपनिषद में पर्यावरण शिक्षा को लेकर एक अहम बात कही गई है। इसके अनुसार, पर्यावरण का रिश्ता सभी जीवों से है इसलिए सबको पर्यावरण की रक्षा करनी है ताकि पृथ्वी पर सब खुशहाल रहें। 1911 में कोर्नेल विश्वविद्यालय के अन्ना बोस्टफोर्ड कोमस्टाक ने हैंडबुक फार नेचर पुस्तक लिखकर इस दिशा में अहम भूमिका निभाई। उन्होंने बच्चों और शिक्षकों को पर्यावरण और सांस्कृतिक मूल्य समझने के लिए प्रेरित किया। दुनिया के महान प्रकृतिवादी लुई अगासिज ने कई दशक पहले विद्यार्थियों को किताब नहीं बल्कि प्रकृति का अध्ययन करने की प्रेरणा दी थी। अगासिज की पर्यावरण शिक्षा को दुनिया ने इतना महत्व दिया कि बीसवीं सदी के आरंभ में 'प्रकृति शिक्षा' नाम से एक अहम शैक्षिक कार्यक्रम की मुहीम चल पड़ी।

## पृथ्वी दिवस : पर्यावरण शिक्षा हेतु मील का पत्थर

22 अप्रैल 1970 को पहले पृथ्वी दिवस के रूप में मनाया गया था। इसे आधुनिक युग के पहले पर्यावरण शिक्षा आंदोलन के तौर पर देखा जाता है। उसी साल दुनिया के कई देशों में पर्यावरण साक्षरता कार्यक्रम की रूप-रेखा बनाई गई और शिक्षकों को इस विशेष शिक्षा का प्रसार करने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी।

इसके अलावा 1972 में अंतर्राष्ट्रीय फलक पर पहली बार पर्यावरण शिक्षा के महत्व को पहचाना गया। उस साल स्वीडन के स्टाकहोम में मानव पर्यावरण विषय पर संयुक्त राष्ट्र का समारोह आयोजित किया गया था। इस समारोह में दुनिया की पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं से निपटने में पर्यावरण शिक्षा को एक औजार के तौर पर देखा गया और इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए यूनेस्को और संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम ने तीन मुख्य घोषणा किए थे:

- स्टाकहोम डिक्लेरेशन, 1972
- बेलग्रेड चार्टर, 1975
- बिलिसी डिक्लेरेशन, 1977

पूरी दुनिया में पर्यावरण शिक्षा को एक अतिरिक्त या ऐच्छिक विषय के रूप में माना जाता रहा है। स्कूली स्तर पर पर्यावरण शिक्षा के अंतर्गत लिए जाने वाले विषयों में मुख्य तौर पर शामिल होते हैं: प्रकृति विज्ञान के फील्ड ट्रिप, सामुदायिक सेवा प्रोजेक्ट और पर्यावरण से जुड़ी आउटडोर गतिविधियां।

## पर्यावरण शिक्षा में विज्ञान और समाज का तालमेल आवश्यक

अधिकतर शिक्षा पाठ्यक्रमों में विज्ञान और समाज से जुड़े विषयों के साथ जोड़कर पर्यावरण का ज्ञान देने पर जोर दिया जाता है। क्लास रूम के भीतर पर्यावरण के सबक देने से बेहतर माना जाता है बच्चों में आउटडोर लर्निंग और हैंड्स आन गतिविधियों पर बल देना। इन रियल लाइफ अनुभवों से बच्चे पर्यावरण को लेकर जीवन के निर्णय लेने और इकोफ्रेंडली जीवन शैली अपनाने में बढ-चढ़कर हिस्सा लेंगे। दुनिया के अनेक हिस्सों में ग्रीन स्कूल, ग्रीन क्लास रूम जैसी अवधारणा चलाई जा रही है। ये पर्यावरण शिक्षा नीति का अहम हिस्सा भी हैं। हालांकि ग्रीन स्कूल की सुविधा उपलब्ध करने में परंपरागत स्कूल से थोड़ा ज्यादा बजट आता है, मगर ये ग्रीन स्कूल भवन अधिक ऊर्जा दक्ष होते हैं और इनकी लागत चंद सालों में निकल आती है। सेकेंडरी स्कूल और स्नातक शिक्षा स्तरों पर विद्यार्थियों की रूचि के अनुसार उन्हें पर्यावरण की अनेक धाराओं की गहन शिक्षा दी जाती है जैसे कि पर्यावरण विज्ञान और नीति, पारिस्थितिकी या इकोलाजी, पर्यावरण और मानव समाज तथा मानव संस्कृति और इकोलाजी। हम सभी इस बात को महसूस कर सकते हैं कि पर्यावरण शिक्षा का मतलब केवल क्लास रूम की पढाई नहीं है। इस अध्ययन के कई और रास्ते खुलते हैं। पर्यावरण शिक्षा की शुरुआत छोटे बच्चों के लिए घर के पिछवाड़े और बागीचे या स्कूल के मैदान कहीं से भी हो सकती है।

## प्रकृति सबसे बड़ी शिक्षिका

दुनिया के अधिकाँश वैज्ञानिकों ने अपने चारों ओर मौजूद प्रकृति और उसके पर्यावरण से सबक लिए। विज्ञान की अपनी धारा का संबंध प्रकृति से जोड़ा और दुनिया को अपनी खोज और आविष्कारों की सौगात दी। दुनिया के महान वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन जब बच्चे थे तो अपने घर के पिछवाड़े के बगीचे में कीट-पतंगों को निहारने और पहचानने में लगे रहते थे। बालक डार्विन के बाल मन की जो सहज जिज्ञासाएं रहती थीं, उनके जवाब वह प्रकृति से ढूंढ लिया करते थे। इसलिए डार्विन के लिए प्रकृति उनकी सबसे बड़ी शिक्षिका थी। इन सब बातों का जिक्र उन्होंने अपनी मशहूर पुस्तक 'डार्विन की आत्मकथा' में अपने बच्चे के पढने के लिए लिख छोड़ी थीं। डार्विन के निधन के बाद उनके बेटे ने यह किताब छापी और पर्यावरण शिक्षा के इस अनमोल ज्ञान को आज पूरी दुनिया पढ़ सकती है। भारत के पाठकों के लिए पर्यावरण की इस क्लासिक किताब को हिंदी सहित कई भाषाओं में लाने का महत्वपूर्ण काम किया है विज्ञान मंत्रालय के संस्थान विज्ञान प्रसार ने। जलवायु, भूगोल, भूविज्ञान, जैवविविधता, समाज और अर्थव्यवस्था के लिहाज से हमारे देश में व्यापक विविधता मौजूद है। इसी कारण यहां पर्यावरण शिक्षा स्थान विशेष के अनुसार बदलता है। बच्चों के लिए पर्यावरण की पहली पाठशाला उसका घर, खेत, आस-पड़ोस और फिर स्कूल होती है। इन सभी जगहों से उसे खान-पान, पोषण, पानी से होने वाली बीमारियों, स्वच्छता, खेत और जंगल के बारे में जानकारी मिलती है। धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए इन बच्चों को प्रदूषण से लेकर जलवायु परिवर्तन जैसी पर्यावरण समस्याओं और उनके समाधान के बारे में भी पता चलता है। इस तरह फैलती है पर्यावरण के संरक्षण को लेकर जागरूकता।

## भारत में पर्यावरण शिक्षा

भारत में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने देश के करीब बीस विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा स्तर पर पर्यावरण को लेकर पाठ्यक्रम तय किये हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के साथ-साथ देश के अनेक इंजीनियरिंग कालेजों और तकनीकी संस्थानों में पर्यावरण इंजीनियरिंग का पाठ्यक्रम चलाया जा रहा है। विश्वविद्यालय और शैक्षिक संस्थानों में जहां एक तरफ पर्यावरण से जुड़ी औपचारिक शिक्षा दी जा रही है, वहीं दूसरी ओर नेशनल म्यूजियम आफ नेचुरल हिस्ट्री, नई दिल्ली साल 1978 से बच्चों और आम जन में पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने के लिए अनौपचारिक शिक्षा प्रदान कर रहा है। प्रदर्शनी और रोचक गतिविधियों के माध्यम से नेशनल म्यूजियम इस काम को अंजाम दे रहा है। भारत का पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय भी 1983 से पर्यावरण शिक्षा, जागरूकता और इस दिशा में प्रशिक्षण की योजनाएं लगातार चला रहा है। इन योजनाओं के मुख्य मकसद हैं: मानव और पर्यावरण के रिश्ते को समझना, पर्यावरण की रक्षा को लेकर मानव कौशल में वृद्धि करना, सम्मेलन, कार्यशाला, प्रशिक्षण, नेशनल ग्रीन कार्प्स और

इको क्लबों के जरिये पर्यावरण जागरूकता उत्पन्न करना।

पर्यावरण मंत्रालय समूचे देश के गाँवों और शहरों में पर्यावरण जागरूकता अभियान के तहत एनजीओ, स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय, शोध संस्थान, महिला और युवा संगठन, सेना यूनिट, सरकारी विभाग को साधारण वित्तीय सहायता देता है। इन गतिविधियों के आयोजन और निगरानी के लिए मंत्रालय द्वारा 34 क्षेत्रीय संसाधन एजेंसियों को नियुक्त किया गया है। मंत्रालय ने साल 2001 से नेशनल ग्रीन कार्प्स नामक एक और अनोखा पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम शुरू किया है। इसके तहत ऐसे बच्चों का एक कैडर तैयार किया जाता है जो पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के लिए काम करते हैं। 1 लाख से ज्यादा इको क्लबों के साथ आज यह देश का सबसे बड़ा पर्यावरण संरक्षण नेटवर्क बन चुका है। इसमें ग्रामीण स्तर से लेकर शहरों तक पर्यावरण से जुड़ी जागरूकता का प्रसार किया जा रहा है। मंत्रालय इन तमाम गतिविधियों के अलावा समय-समय पर नदियों, तालाबों, जैवविविधता, वन और वन्य जीवों के संरक्षण को लेकर जागरूकता अभियान भी चलाता है। बच्चों की दिलचस्पी का ध्यान रखते हुए मंत्रालय पर्यावरण से संबंधित क्विज प्रतियोगिता के आयोजन करता है। जन साधारण की सहभागिता को सुनिश्चित करने के लिए पर्यावरण यात्राओं का अनोखा आयोजन भी किया जाता है। गांव से लेकर कस्बों और शहरों तक पर्यावरण मंत्रालय के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा और जागरूकता के अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। आशा कर्मियों के सहयोग से गांव के घर-घर तक पर्यावरण का संदेश प्रसारित किया जा रहा है। ग्राम पंचायत की ओर से भी नदी, तालाब, पेड़-पौधों जैसे प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर काम किया जा रहा है। गाँवों में स्वयं सहायता समूह की सहायता से प्रकृति के संरक्षण से जुड़ी जागरूकता फैलाई जा रही है।

## बच्चों में पर्यावरण की अलख जगाते 'विज्ञान क्लब'

गांव और शहर दोनों स्थानों पर स्कूल प्रबंधन के मार्गदर्शन में पर्यावरण जागरूकता और इसकी शिक्षा के प्रयास शुरू हो गए हैं। स्कूल के इस अभियान से बच्चों के मन में पर्यावरण को लेकर लगाव उत्पन्न होता है। बच्चे भविष्य के जिम्मेदार नागरिक हैं और उनके माध्यम से समाज में परिवर्तन आएगा। विज्ञान मंत्रालय के संस्थान विज्ञान प्रसार का एक अनोखा कार्यक्रम विपनेट क्लब है। इसमें स्कूल के या स्कूल के बाहर के बच्चे मिलकर यह क्लब बनाते हैं। इस क्लब के माध्यम से बच्चे अपने आस-पास की पर्यावरण समस्या का पता लगाकर एक परियोजना बनाते हैं। इसके तहत वे प्रयोग और उसके नतीजे के रूप में समस्या का समाधान ढूंढते हैं। पर्यावरण को लेकर बचपन से एक संस्कार और जागरूकता के विकास का यह एक अनोखा प्रयोग साबित हुआ है।

अहमदाबाद का सेंटर फार एन्वायरनमेंट एजुकेशन पर्यावरण शिक्षा और जागरूकता की दिशा में सराहनीय काम कर रहा है। इसकी स्थापना अगस्त 1984 में पर्यावरण और वन मंत्रालय के सहयोग से एक उत्कृष्टता केंद्र के रूप में की गई थी। इसका संक्षिप्त नाम 'सीईई' अधिक लोकप्रिय है। सीईई पर्यावरण और दीर्घकालिक विकास के बारे में जनजागरूकता उत्पन्न करने के लिए कार्यक्रमों और सामग्रियों का विकास करता है। इसकी देश-विदेश में अनेक शाखाएं हैं। अपनी स्थापना के समय सीईई देश की एकमात्र संस्था थी जिसने औपचारिक रूप से पर्यावरण शिक्षा का बीड़ा उठाया था। सेंटर फार साइंस एंड एजुकेशन (सीएसई) नामक संस्था भी सरकार और आमजन दोनों को पर्यावरण के प्रति सजग व सचेत करने में अपनी अहम भूमिका निभाती है।

पर्यावरण शिक्षा का अध्ययन करने वाले लोगों के लिए आज रोजगार की संभावना भी बनने लगी है। शिक्षा, उद्योग, विज्ञान, नीति निर्माण जैसे अनेक क्षेत्रों में असंख्य अवसरों की संभावना मौजूद है। उद्योगों और सरकार में ऐसे प्रोफेशनल की मांग पैदा होने लगी है जिनसे उम्मीद है कि वे उत्पाद और सेवाओं के पर्यावरण प्रभावों का अध्ययन सामने रखें। आने वाले समय में पर्यावरण की शिक्षा नौकरियों के लिए एक अहम शर्त होगी।

पर्यावरण को साथ लेकर विकास करना आज दुनिया के सभी देशों की प्राथमिकता है। भारत भी इस प्रयास में पीछे नहीं। ऊर्जा की दैनिक जरूरतों को पूरा करने के लिए हमारा देश जीवाश्म ईंधन पर अति निर्भरता से परहेज करने लगा है। साथ ही हम सौर ऊर्जा और दूसरे वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों के इस्तेमाल की ओर भी बढ रहे हैं। पर्यावरण शिक्षा की अलख गांव और शहर में जगाने के लिए अनेक स्तरों पर कोशिशें चल रही हैं। केंद्रीय पर्यावरण और जलवायु परिवर्तना मंत्रालय ग्रीन गुड डीड नामक पर्यावरण केंद्रित अभियान चला रहा है जिसमें लोगों को पर्यावरण को सहेजने वाली गतिविधियों के लिए प्रेरित किया जा रहा है। पर्यावरण की सुरक्षा हम सबकी जिम्मेदारी है, इसलिए पर्यावरण शिक्षा हम सबके लिए बेहद जरूरी हो जाती है। यह शिक्षा जीवन के हर पड़ाव पर जरूरी है। हमें इस ओर गंभीर रहना चाहिए क्योंकि पर्यावरण को साथ लेकर ही हम दीर्घकालिक विकास हासिल कर सकते हैं।

mmgore@vigyanprasar.gov.in

*4 नवम्बर 1966 को इंदौर में जन्मी डॉ. बबीता अग्रवाल इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सीनियर असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हैं। एम.एस-सी (कार्बनिक रसायन) और डी. फिल.उपाधि प्राप्त डॉ. बबीता अभी तक 30 से अधिक शोध पत्र एवं लेख लिखे है। 'सुगंधित पौधे' आपकी प्रकाशित कृति है। विज्ञान कला और साहित्य की त्रिवेणी : डॉ. विपिन कुमार अग्रवाल का सह लेखन किया। आपको 'भारत विकास परिषद स्वर्ण जयंती सम्मान' एवं 'एडू शाइन 2014' सम्मान प्राप्त है। प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य विभिन्न सौंदर्य प्रसाधनों के निर्माण तथा उनमें उपस्थित विभिन्न रासायनिक यौगिकों एवं प्राकृतिक पदार्थों के बारे में पाठकों को अवगत कराना है। लेखिका का मंतव्य है कि यथासंभव प्राकृतिक पदार्थ युक्त सौंदर्य प्रसाधनों का उपयोग करना चाहिए जो स्वास्थ्य एवं सौंदर्य के लिये लाभदायक होता है।*

# मुर्गीखाना

*डॉ.रेखा कस्तवार की इस कहानी को विज्ञान कथा या विज्ञान गल्प मानकर इसलिए पढ़ा जा सकेगा कि इसमें विज्ञान शिराओं में बहते रक्त की तरह है। विज्ञान कथाओं की आरंभिक आधारभूत मान्यताओं अथवा कसौटी पर यह कथा जस की तस खरी उतरे न उतरे, विज्ञान गल्प के संकेतों भर से यह 'साइंसफिक्सन के लिए एक ऐसा उदाहरण है जिसे भविष्य की कहानी कहा जा सकेगा।'*

डॉ.रेखा कस्तवार

'बस एक बार और .....।' मानव के मनुहार में आदेश था। वसुधा को लगा, उसका सपना फिर स्थगित हो जाएगा। वसुधा ने वस्तु स्थिति से अवगत कराना चाहा, अभी सम्भव नहीं, सब कुछ अभी रूटीन में नहीं आया है। कहने को यह बताया गया है कि यह वसुधा का रेस्ट पीरियड है पर वह जानती है यह आफ्टर इफ्फेक्ट्स झेलने का वक्त है। उसके मूड स्विंग होते हैं। मानव जानता है, यह स्वाभाविक है। मानव कहता है यह अगला सपना देखने का समय है। मानव वर्तमान और भविष्य पर से क्षण भर भी अपनी नज़रें नहीं डिगाता। सब कुछ सोचा-समझा, सुनियोजित। उसे कोई कनफ्यूजन नहीं। फण्डे एकदम क्लियर। उसकी दृष्टि विस्तार में वसुधा शामिल होनी ही चाहिए। ऐसा भी मानता है मानव। इसके कारण भी हैं। वसुधा ने अब तक उसका साथ दिया है। आँख बंद कर भले न किया हो, बहुत सोच-समझ कर भी नहीं किया है। मानव की बेहतरी में शायद यही उसका योगदान साबित हो, मानव की आँखों में उसके लिए प्यार और भरोसा जागे। मानव ने उसे शादी के लिए पसंद किया उसके पहले उसने प्लानिंग कर ली थी कि वह अण्डे बेचना चाहता है। मेकेनिकल इंजीनियर होते हुए भी उसने इसकी शॉर्ट टर्म ट्रेनिंग ली थी। पूरी प्रक्रिया से अवगत था, फायदा-नुकसान सबका हिसाब-किताब चाक-चौबंद।

वसुधा को मानव ने न्यूज़पेपर में फोटो देखकर पसंद किया। शहर के नामी कॉलेज की फ्रेशर्स पार्टी की खबर थी वह। क्राउन वाली 'मिस फ्रेशर' को दिपदिपाती आँखों से देखती वह लड़की यूँ ही स्मृति से ओझल करने लायक नहीं लगी। रंगीन फोटो में वसुधा को सारे कोणों से परखा हो, ऐसे देखा मानव ने। पता लगाया, वसुधा बिना माँ-बाप की इकलौती बेटी है जो मामा के घर रह कर बी.एस-सी। फर्स्ट ईयर(बायो) में पढ़ रही है। उसको यह सुभीते की बात लगी। वसुधा इस घर में ही रच-बस जाएगी, मुड़कर देखने या अतीत में भागने की गुंजाइश नहीं होगी। देखने-दिखाने में डेटिंग/वेटिंग/एंगेजमेंट में वक्त जाया करना मानव की फितरत नहीं। पहली मुलाकात में चेहरे-मोहरे से आश्वस्त होते ही दूसरी मुलाकात में मानव ने मामा के सामने शर्त रखी-साइंस-टेकनॉलॉजी का ज़माना है। मुझे वसुधा की हेल्थ रिपोर्ट ओके चाहिए। फुल फिज़िकल टेस्ट, खासतौर पर कोई जेनेटिक प्रॉब्लम.....न हो। ओके रिपोर्ट आए तो फोन कीजिएगा। शादी की तारीख तै कर लेंगे। दो मुलाकातों के बीच मामा मानव की खोजबीन कर चुके थे। उसके बारे में जान चुके थे। मामा को ऐसा लगा।वसुधा और मानव की कहानी अलग-अलग नहीं। पाँच साल पहले माँ-बाप एक साथ चल बसे, रोड एक्सीडेंट में। इंजीनियरिंग की पढ़ाई के दौरान कैंपस सिलेक्शन नहीं हुआ। दो साल पहले पोल्ट्री फार्म खोला है। बिज़नेस के शुरूआती धक्के खा रहा है। पोल्ट्री फार्म और उससे लगे छोटे-से घर के रख रखाव की जाँच पड़ताल ने मामा को आश्वस्त किया। फिर लड़का खुद हाथ माँगने आया है। मेडिकल चेकअप की बात ने उन्हें पहले चिंतित किया फिर संशयित और अन्ततः आश्वस्त किया। परिवार में दो ही प्राणी हैं, स्वास्थ्य बड़ी नियामत है। मामा को एक चिंता अभी भी थी, वसुधा सिर्फ अट्ठारह की है और मानव सत्ताईस-अट्ठाईस का - जैसा कि मानव ने खुद बताया।

*डॉ. रेखा कस्तवार सरोजनी नायडू शासकीय हिन्दी महाविद्यालय भोपाल में प्राध्यापक हैं। हिन्दी गद्य लेखन के क्षेत्र में उनका महत्वपूर्ण काम और मान है।आपकी स्त्रीचिंतन की चुनौतियां, किरदार जिंदा हैं, अपने होने का अर्थ जैसी पुस्तकें प्रकाशित व चर्चित हुई। आपके द्वारा रचित इधर की कहानियों में वैज्ञानिक दृष्टि का गहरा समावेश और अन्वेषण है।*

वे कुछ रूकना चाहते थे पर मुक्त भी होना चाहते थे। उनके अपने पारिवारिक दबाव थे।

..शादी के सात साल बाद अपने स्थगित सपने के साथ वसुधा वहीं खड़ी है। मानव के घर की देहरी पर। मानव का आदेश है- 'एक बार और।' वसुधा विचलित है।

वसुधा का मन जब भी उदास या विचलित होता है, सिरदर्द होता है, उसके पास मुर्गियों के पास जाने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। आस-पास कुछ खेत हैं जो अधिया-बटिया पर हैं। एक किलोमीटर बिना पेड़ों वाले पगडंडी रास्ते को पार कर वह मुख्य सड़क आती है, जहाँ से शहर के रास्ते खुलते हैं। मानव हर संडे सुबह तैयार रहने कहता है, मिलिट्री ऑर्डर की तरह। वे शहर में समय बिता कर शाम से पहले घर लौट आते हैं। मुर्गियों को खाना-पीना-खुली हवा-रोशनी-सफाई सब चाहिए। नौकरों को हिदायत देने के बावजूद मानव को अपना व्यक्तिगत दखल संतुष्ट रखता है। वसुधा के बारे में भी उसका विचार इससे अलग नहीं।

दोपहर तीन बजे से शाम छः बजे तक रोज मानव अण्डे लेकर शहर जाता है। जब वह प्रोजक्ट पर होती है, उसे भी शहर जाना होता है। शिड्यूल के हिसाब से मानव अण्डों के बिज़नेस के समय में हेरफेर बर्दाश्त कर लेता है। वह उसका चुनाव भी है। वरना बाकी समय- तीन से छः का समय वसुधा का अपना समय है। साथ के नाम पर उसके पास मुर्गियाँ हैं, वह उन्हें दड़बों से बाहर शेड में आने को उकसाती है, अपनी तरह उन्हें भी मुक्त रह लेने का अवसर देती है। मुर्गियाँ कभी बागड़ पार नहीं करतीं, नुकीले तारों वाली बाउंड्री से बाहर निकलने का रास्ता नहीं खोजतीं, और तो और कभी गेट खुला छूट भी जाये तो उस ओर ध्यान नहीं देतीं। वसुधा को भी ऐसी सुध कहाँ? वह खुद गेट लगा आती है, अकसर। मुर्गियाँ जानती हैं यह मालिक और नौकरों की छुट्टी का समय है। वसुधा और वे सहज उन्मुक्त जी लेती हैं यह वक्त। बावजूद इसके वसुधा जानती है, मानव का कोई वफादार आसपास ही होता है। मुर्गियों के भारी शरीर और पतली टाँगे देखकर दुःख होता है वसुधा को। शरीर तो वसुधा का भी लगातार ऐसा ही होता जा रहा है। मानव को ज़्यादा और जल्दी रिज़ल्ट चाहिए। वह मुर्गी से चूज़े नहीं चाहता। ज्यादा अण्डे.....कैसे भी। इसलिए ऑक्सीटोसिन के इंजेक्शन... अनफर्टिलाइज्ड अण्डे। मानव के पोल्ट्री फार्म में मुर्गे नहीं हैं। वसुधा को लगता है, क्या मुर्गियाँ उदास नहीं होती होंगी, उनकी अपनी ज़रूरतें! मुर्गों के साथ की कामना। अपने अण्डे सेने का सुख ! चूजों को दुलारने का मन! वह अपनी सारी ममता मुर्गियों पर उतारती है। मुर्गियाँ कहाँ जाएँ, कैसे जाएँ? उनका कोई और घर नहीं। वसुधा उदास और विचलित होती है, कभी कभी भयभीत भी। मानव समझाता है, तुम जानती तो हो, ये आफ्टर इफ्फेक्ट्स हैं, समय के साथ सब सबसाइड हो जाएँगे। वह कभी भी साइड इफ्फेक्ट शब्द का उपयोग नहीं करता । वसुधा भयभीत इसलिए भी होती है कि उसने मानव को पुरानी बेकाम होती मुर्गियों को शहर ले जाते और खरीदी गई नई नन्हीं मुर्गियों से उनके खाली हो गए दड़बों को आबाद करते देखा है। मुर्गियों से चूज़े बनने में वक्त बर्बाद होताहै, झंझट है, मानव मानता है। अण्डे तत्काल और अच्छे दामो में बिकते हैं। तब फिक्र क्या !

**वसुधा का सपना भी माँ बनने का है। मानव सहमत नहीं। किसलिए चाहिए? टाइम किलिंग। पहले पेट में पालो-पोसो, फिर बाहर पालो-पोसो। उनके लिए जोड़ो। तुम्हें किसलिए चाहिए बच्चा? ये भी तो सोचो, उसकी किस्मत भी हमारे तुम्हारे जैसी हुई और अकेला बच गया तो..? ऐसा इतिहास दोहराने से क्या हासिल-? अच्छे से जीने के लिए पैसा चाहिए-लाँग लाइफ वर्सेस क्वालिटी लाइफ... उसका वोट क्वॉलिटी लाइफ को जाता है, कोई नहीं पूछता किसकी क्वॉलिटी लाइफ, वसुधा की या मानव की। पैसा और सिर्फ पैसा। कैसे कमाया जाए इसी गुंताड़े में रहता है मानव। अण्डों का बिज़नेस। ..... प्रोजेक्ट पर लगा देता है वसुधा को भी। मुस्कुरा कर कहता भी है, जितना मैं छः महिने मे कमाता हूँ, तुम एक महिने में कमा लेती हो।**

वसुधा का सपना भी माँ बनने का है। मानव सहमत नहीं। किसलिए चाहिए? टाइम किलिंग। पहले पेट में पालो-पोसो, फिर बाहर पालो-पोसो। उनके लिए जोड़ो। तुम्हें किसलिए चाहिए बच्चा? ये भी तो सोचो, उसकी किस्मत भी हमारे तुम्हारे जैसी हुई और अकेला बच गया तो--? ऐसा इतिहास दोहराने से क्या हासिल-? अच्छे से जीने के लिए पैसा चाहिए-लाँग लाइफ वर्सेस क्वालिटी लाइफ... उसका वोट क्वॉलिटी लाइफ को जाता है, कोई नहीं पूछता किसकी क्वॉलिटी लाइफ, वसुधा की या मानव की। पैसा और सिर्फ पैसा। कैसे कमाया जाए इसी गुंताड़े में रहता है मानव। अण्डों का बिज़नेस। .....प्रोजेक्ट पर लगा देता है वसुधा को भी। मुस्कुरा कर कहता भी है, जितना मैं छः महिने मे कमाता हूँ, तुम एक महिने में कमा लेती हो। मुझे मदद मिल जाती है। बिज़नेस के लिए एकमुश्त रकम मिलना बहुत मायने रखता है। वसुधा बताना चाहती है, मुझे और तुम्हारी मुर्गियों को एक जैसी तकलीफ होती है। वे कह नहीं पातीं और मैं भी कहाँ ?

पहली पहली बार जब मानव ने उसे प्रोजेक्ट पर लगाया था-हाँ, मानव उसे प्रोजेक्ट की तरह देखता है और इसी शब्द का इस्तेमाल भी करता है-तब उसे लगा था कि यह शादी के पहले जैसा फुल फिजिकल चेकअप है, उसे प्यार आया था मानव पर, कितना ख्याल रखता है उसका, उसकी सेहत के लिए फिक्रमंद। बाद में जब डॉक्टर ने सारा प्रोजेक्ट समझाते हुए उससे सहमति माँगी तो वसुधा के पैरों तले ज़मीन बाकी नहीं रही। मानव ने उसे दुलार से कहा था यही खाने-कमाने के दिन हैं, बस थोड़ा सा साथ दे दो। मेरा बिज़नेस एस्टेब्लिश होने में तुम्हारी ज़रूरत है। सामने वाली पार्टी से बात हो गई है, सब कुछ मैच हो रहा है। डॉक्टर ने बताया था कि "फुल हेल्थ चेक अप के बाद तीन से पॉच हफ्ते की प्रक्रिया है। एग ट्रेवलिंग सक्सेसफुल हो जाए...। वसुधा! किसी के परिवार को आबाद करना पुण्य का काम है।" डॉक्टर ने पीठ पर हाथ रखते हुए कहा था। "तुम्हारी नेचुरल साइकिल 'लुप्रान' देकर सप्रेस करेंगे--रिसीवर की साइकिल से तालमेल बिठाने। मेंसेस के तीसरे दिन से अण्डों को उत्तेजित करने हारमोंस के इंजेक्शन... बस दस बारह दिन...

तुम चाहो तो घर में भी लगा सकती हो... मानव रोज शहर आता ही है, चाहो तो सेफ साइड तुम यहीं आकर लगवा लो। डॉक्टर ने ऐसे कहा जैसे मानव उनका निकट का परिचित हो। तुम समझती होगी... अण्डों को उत्तेजित करना होता है। एक या दो की जगह दस-बारह ... उससे अधिक भी ... सक्सेस रेट बढ़ाने यह ज़रूरी है। अण्डों को मेच्योर करने दस-बारह दिन बाद HCG (ह्यूमन कोरिओनिक गोनेडोट्रोपिन) ड्रग... फिर प्रतीक्षा... सोनोग्राफी... सब कुछ मनमाफिक होने पर सिरींज से वैजाइना के F: एग कलेक्शन... तुम्हें पता भी नहीं चलेगा, ऐनेस्थीसिया... हाँ बेहोश करेंगे तुम्हें। ... और फिर रिट्रेवल... लेकिन वो तुम्हारा पार्ट नहीं है। अभी तो रिसीवर तैयार है तो सब तत्काल होगा वर्ना एग बैंक... फ्रोजन एग... " एक साँस में कह गई डॉक्टर मशीनी अंदाज़ में। डरावने यथार्थ से अचानक ऐसा भयावह सामना करने तैयार नहीं थी, वसुधा। डरते हुए साइड इफ्फेक्ट्स का पूछा तो बहुत प्रोफेशनल तरीके से डॉक्टर ने समझाया- "सब पर्सन टू पर्सन डिफर करता है। हाँ, आपकी साइकिल ब्रेक हो जाएगी चार महिने, पाँच महिने भी, कभी-कभी छः माह तक। पर लौटती है। और छोटे-छोटे साइड इफ्फेक्टस... कुछ वेट गेन! सब सबसाइट हो जाएंगे, फिक्र मत करो।" उफ मानव! जिस रास्ते से मैंने कामना की थी भविष्य जनमने की, उससे तुम अपना आज... अण्डों का व्यापार जमा रहे हो। मेरे अण्डे आज रिसीवर की कोख तक यात्रा करेंगे, किसी घर की किलकारी बनेंगे। कल के अण्डे फ्रोज़न एग में तब्दील होकर किसी अन्जाने की कोख हरियाने निस्पंद स्पंदनों में प्रतीक्षा करते जिएंगे। मानव की आँखों में मनुहार है या आदेश पढ़ नहीं पाती, कुछ कह नहीं पाती... कोई विकल्प? कहाँ तलाशें? उसका अपना कोई नहीं, मामी ने मामा के जाने के बाद ऐसा पल्ला झाड़ा कि गर्द उसके तन मन पर हमेशा के लिए छा गई।

...आज मानव का आदेश - 'अब एक बार और...' शादी के सात सालों में चौथी बार। बहुत डरते हुए वसुधा की आँखों ने फिर अपना स्थायी सवाल खड़ा किया - 'और अपना चूज़ा...?' मानव का जवाब-'वेस्टेज ऑफ टाइम एण्ड मनी।' मानव को वह कैसे समझाए जिसे तुम उपलब्धि का क्षण कहते हो, वहाँ से मेरे समय की व्यर्थता का समय शुरू होता है। हर बार मेरे शरीर पर चर्बी की परत मोटी होती जाती है, मूड चेंज होते रहते हैं, किसी बार आँखें धुँधली हुईं, कभी बाल रूखे। सिर दर्द, जी मचलाना, कुछ लक्षण हर बार, कुछ अलग-अलग बार। डॉक्टर और तुम लगभग एक सी भाषा में रिएक्शन देते हो। यह सब इस सबके(प्रोजेक्ट के) बिना भी हो सकता था, सीधा कनेक्शन नहीं...। बार-बार कहने पर रटा-रटाया जवाब- 'सबको तो नहीं होता... पर्सन टू पर्सन डिफर करता है।' मानव! तुम्हारे लिए जो ओवेरियन रिट्रेवल है (डॉक्टर की भाषा में) वह मेरे लिए टूट-फूट का सबब है। तन मन दोनों टूटते-फूटते हैं। तुम तो जानते भी नहीं मानव, इस बार आठ महिने होने पर भी वसुधा का ऋतुचक्र लौटा नहीं है। ऋतुचक्र पूरा नहीं होने पर वसुधा को दुहोगे कैसे? प्रकृति से किताना खिलवाड़ करोगे? उसे अपने सृजन के मौके दो। उसे अपने हिसाब से जीने और बनने दो। कितना लालच... इतना लालच?

**हमारे यहाँ लोग रेग्यूलरली अवेरियन रिट्रेवल का हिस्सा बनते हैं, पैसे के लिए एग बैंक का हिस्सा भी... पर आपके केस में ...।' तीनों की चुप्पी देर तक पसरी रही। अपने नुकसान से तड़फ गई थी वसुधा... फिर मेरा बच्चा...? 'लम्बी टेस्ट प्रक्रिया है, कोख सही सलामात भी है तो तुम्हें अपने अण्डे कौन देगा? लाखों रूपये और दस प्रतिशत से भी कम सक्सेस रेट।' ये शब्द अजनबी नहीं थे वसुधा के लिए। वसुधा का सवाल दफन रहा, मेरे फ्रोज़न एग्स क्या मुझे ही खरीदने होंगे।**

तुम्हारी जिद के आगे झुकना पड़ा है, फिर भी सोचा है, वह डॉक्टर से अपने चूज़े की बात करेगी। ऋतुचक्र वापसी तक का समय है। हो सकेगा तो इस बार इंकार करेगी मानव के अण्डों के बिज़नेस का हिस्सा बनने से। वह मौका आया ही नहीं। लम्बी जाँच-पड़तालों के बाद डॉक्टर ने उदास हो कर बताया-'यू लॉस्ट योर बोथ ओवरीज़...।' चीख गले में धुटी पर आँखों में उतर आई...। एक शब्द फूटा....'कोख ?' 'यूट्रस सही सलामत है।' 'कैसे हुआ? क्यों हुआ?'... स्थायी जवाब...'पर्सन टू पर्सन डिफर करता है। हमारे यहाँ लोग रेग्यूलरली ओवेरियन रिट्रेवल का हिस्सा बनते हैं, पैसे के लिए एग बैंक का हिस्सा भी... पर आपके केस में ...।' तीनों की चुप्पी देर तक पसरी रही। अपने नुकसान से तड़फ गई थी वसुधा... फिर मेरा बच्चा...? 'लम्बी टेस्ट प्रक्रिया है, कोख सही सलामात भी है तो तुम्हें अपने अण्डे कौन देगा? लाखों रूपये और दस प्रतिशत से भी कम सक्सेस रेट।' ये शब्द अजनबी नहीं थे वसुधा के लिए। वसुधा का सवाल दफन रहा, मेरे फ्रोज़न एग्स क्या मुझे ही खरीदने होंगे।

अपना चूज़ा... बेकाम मुर्गियाँ... उनका हश्र ... तुम्हारे घर लौटते हुए डर लग रहा है मानव... दड़बे में बंद अण्डा देती और बेकाम मुर्गियाँ.... शहर से लौटते हुए नई मुर्गियों की आमद...क्या फिर तुम्हारे पोल्ट्री फार्म के दड़बे का कोई कोना खाली होगा? वसुधा मुर्गियों समेत मानव की गिरफ्त से मुक्त होने छटपटाने लगी।

rekhakastwar@gmail.com

*महेन्द्र कुमार माथुर का जन्म 20 जुलाई 1940 को हुआ। वे बीएचईएल भोपाल के सेवानिवृत्त उपमहाप्रबंधक हैं। अनेक प्रशासन अकादमी और इंस्टीट्यूट और विज्ञान सेन्टर के संकाय सदस्य होने के साथ आपने प्रबंध की विषयों पर दर्जनों लेख लिखे। हिन्दी अंग्रेजी अनुवाद पर आपका वृहद काम है। इस पुस्तक में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति पर प्राचीन भारतीय एवं आधुनिक अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। साँख्य दर्शन ब्रह्माण्ड के रहस्यों को समझने की दिशा में 'मील का पत्थर' है। आइंस्टीन के सिद्धांत, स्टीफन हाकिंग के विचार एवं बिग बैंग थ्योरी का समुचित समावेश किया गया है।*

# डेयरी टेक्नॉलॉजी

संजय गोस्वामी

*संजय गोस्वामी विगत पंद्रह वर्षों से विज्ञान लेखन से जुड़े हैं आपने हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख लिखे हैं जो विज्ञान विषयक होते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में वे विगत लगभग पांच वर्षों से शृंखलाबद्ध लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान लेख, विज्ञान समाचार, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन हुआ है। कई पुरस्कारों से सम्मानित संजय गोस्वामी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प.अ. केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य हैं। आप इन दिनों मुंबई में रहकर हिन्दी विज्ञान पत्रिका में लेखन एवं संपादन से संबद्ध हैं।*

भारत विश्व का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश है। मगर इसके बावजूद भारतीय डेयरी सेक्टर अभी विकास व आधुनिकीकरण की आरंभिक अवस्था में ही है। हम विश्व में सबसे अधिक गोवंश संख्या पर तो गर्व करते हैं लेकिन हकीकत यह है कि अमेरिकी गाय की तुलना में भारतीय गाय का औसत दूध उत्पादन काफी कम है। स्पष्ट है कि डेयरी उद्योग में विकास की अभी व्यापक संभावनाएं हैं और इसके साथ ही इसमें करियर बनाने का स्कोप भी जबरदस्त है। एक अध्ययन के अनुसार भारतीय किस्मों के पशुओं में ए2एलेली जीन ज्यादा होता है। इससे इन पशुओं का दूध ज्यादा पौष्टिक हो जाता है। इस सेक्टर का मार्केट कैपिटलाइजेशन 1,18,000 करोड़ रुपए है। अनुमान है कि सन् 2020 तक भारत विश्व की डेयरी उत्पाद की जरूरतों के 29 प्रतिशत की आपूर्ति करेगा। बेशक ग्रामीण भारत के कमजोर तबकों के आर्थिक विकास में डेयरी सेक्टर अहम भूमिका निभाने जा रहा है। डेयरी टैकनोलजिस्ट अपने स्तर पर इसमें बड़ा योगदान कर सकते हैं। डेयरी उद्योग में लगातार हो रहे परिवर्तनों को देखते हुए इस क्षेत्र में अच्छे टेक्नॉलॉजिस्ट की जरूरत लगातार बढ़ती ही जानी है। साथ ही यह जरूरी है कि डेयरी टेक्नॉलॉजिस्ट नवीनतम टेक्नॉलॉजी से वाकिफ रहें। डेयरी टेक्नॉलॉजी में बीटेक करने से आप डेयरी उद्योग में उत्तम भूमिका निभा सकते हैं। यह डिग्री कोर्स आपको डेयरी सेक्टर को सुचारू रूप से चलाने की स्किल प्रदान करता है। इसके परिणामस्वरूप, हमारे यहाँ अधिशेष दूध की उपलब्धता से अच्छी गुणवत्ता वाले डेयरी उत्पादों को बनाने की प्रचुर संभावना है। इस संभावना को देखते हुए भारत ने वर्ष 2020 तक देश में 1250 डेयरी संयंत्र स्थापित करने का लक्ष्य रखा है जो कि वर्तमान से करीब 850 अधिक हैं। आश्चर्य की बात यह है कि भारत दुनिया का सबसे ज्यादा दूध उत्पादक देश होने के बावजूद उसकी निर्यात हिस्सेदारी दुनिया के कुल निर्यात की मात्र 1.6 प्रतिशत ही है। अतः हमारे यहाँ डेयरी तकनीकी विशेषज्ञों की सहायता से डेयरी उत्पादों के निर्यात को बढ़ाने की विपुल संभावनाए हैं। वर्तमान समय में हमारे देश में डेयरी टेक्नॉलॉजी के करीब 25 कॉलेज/संस्थान हैं जहाँ से प्रतिवर्ष 800 छात्र बी.टेक करके निकलते हैं। परन्तु देश में संभावित डेयरी विकास के नए आयामों को देखते हुए यह संख्या बहुत कम है। देश में आने वाले समय में बी.टेक किए हुए छात्रों की सेवाओं की बहुत जरूरत होगी। डेयरी टेक्नॉलॉजी, इंजीनियरिंग का वह क्षेत्र है जो दूध और उसके उत्पादों के प्रसंस्करण से जुड़ा है। डेयरी प्रौद्योगिकी को हम खाद्य प्रौद्योगिकी का एक घटक भी कह सकते हैं जो विशेष रूप से जैव रसायन, जीवाणु, दुग्ध रसायन और इंजीनियरिंग विज्ञान का समावेश कर दुग्ध प्रसंस्करण, भंडारण, पैकेजिंग, वितरण एवं दुग्ध पदार्थ जैसे दूध, आइसक्रीम, क्रीम, मिल्क पाउडर, दही आदि उत्पादों को बनाने के साथ उनका सुचारु रूप से परिवहन करने व आवश्यकता पड़ने पर उनका लंबे समय तक उचित भंडारण करने का शैक्षिक ज्ञान उपलब्ध कराता है। खाद्य प्रौद्योगिकी की इस ब्रांच का मुख्य उद्देश्य दूध दूध का बड़े पैमाने पर निर्माण, भंडारण व दुग्ध पदार्थ में होने वाली विकृति को रोकना, इसकी गुणवत्ता में सुधार करना, और उसकी जीवनावधि को बढ़ाने के साथ-साथ दूध व दुग्ध पदार्थो को लंबे समय के लिए मानव उपभोग के लिए सुरक्षित करना है। इस उद्योग में डेयरी उपकरणों के स्वदेशीकरण को

## मुख्य विषय

बी.टेक डेयरी टेक्नॉलॉजी में मुख्य रूप से, डेयरी इंजीनियरिंग, डेयरी प्रक्रिया इंजीनियरिंग, डेयरी संयंत्र डिजाइन और लेआउट, इंस्ट्रुमेंटेशन और प्रोसेस कंट्रोल, इंजीनियरिंग ड्राइंग, डेयरी मशीन, हीट और मास स्थानांतरण, थर्मोडायनामिक्स, गुणवत्ता नियंत्रण, प्रशीतन और एयर कंडीशनिंग इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग, खाद्य इंजीनियरिंग आदि विषय हैं। डेयरी प्लांट मेंटेनेंस, डेयरी उद्योग में उपकरण की डिजाइन, निर्माण और संयंत्र संस्थापन व परियोजना का निष्पादन आदि विषयों को पढ़ाया जाता है। डेयरी टेक्नॉलॉजी में पाठ्यक्रम सामग्री तीन क्षेत्रों में है :

डेयरी इंजीनियरिंग
डेयरी रसायन शास्त्र
डेयरी बैक्टीरियोलॉजी

प्रोत्साहित किया है। इसके परिणामस्वरूप देश में 180 से अधिक डेयरी उपकरण उद्योग चल रहे हैं। डेयरी सेक्टर म नौकरियों के लिए डेयरी टेक्नोलॉजी की डिग्री धारी होना जरूरी है ।

दुग्ध उपकरण आमतौर पर स्टेनलेस स्टील से बना होता है, जो आसानी से साफ और स्वच्छ हो दूध और डेयरी उत्पादों में सूक्ष्मजीवों के स्तर और प्रकार कच्चे माल की माइक्रोबियल गुणवत्ता पर निर्भर करता है रबड़ या अन्य गैर-धातु सामग्री से जुड़े कुछ हिस्सों में बैक्टीरिया को रासायनिक स्वच्छता से निष्क्रिय करना होता है। दूध और डेयरी उत्पादों में सूक्ष्मजीवों के स्तर और प्रकार कच्चे माल की माइक्रोबियल गुणवत्ता पर निर्भर करता है दुग्ध उपकरणों के सतह पर सूक्ष्मजीव मुख्य रूप से स्थानांतरित होते हैं दूध या तरल दूध उत्पाद और केवल न्यूनतम रासायनिक, और भौतिक परिवर्तन पाश्चराइजेशन की स्थिति प्रभावी रूप से नष्ट करने के लिए दुग्ध उपकरण डिजाइन की जाती है दूध क्रीम को व्यापक रूप से वर्गीकृत किया जा सकता हैरू (ए) बाजार क्रीम, जिसका उपयोग सीधे खपत के लिए किया जाता है,और (बी) विनिर्माण क्रीम, जिसका उपयोग डेयरी उत्पादों के निर्माण के लिए किया जाता है। क्रीम के विभिन्न प्रकार हैं :

- टेबल क्रीम
- लाइट क्रीम
- कॉफी क्रीम
- क्रीम क्रीम
- भारी क्रीम

**प्लास्टिक क्रीम** - क्रीम अलगाव का मूल सिद्धांत, भले ही गुरुत्वाकर्षण या केन्द्रापसारक विधि, है इस तथ्य पर आधारित है कि दूध, वसा स्किम दूध के हिस्से से हल्का है। दूध, अपने अलग घनत्व के आधार पर एक-दूसरे से स्तरीकरण करते हैं एजिंग मक्खन ग्लोब्यूल को क्रिस्टलाइज करने के लिए कूल तापमान पर क्रीम अलग किया जाता है, बी.टेक डेयरी टेक्नॉलॉजी सिलेबस उन विषयों को कवर करता है जिनमें डेयरी प्रौद्योगिकी की मूल बातें, दूध की भौतिक रसायन शास्त्र, डेयरी माइक्रोबायोलॉजी, पनीर प्रौद्योगिकी और डेयरी इंजीनियरिंग इत्यादि का परिचय शामिल है।

**डेयरी टैंक का गुणवत्ता** -. डेयरी टैंक धातु के शेल और डीश इन्ड को वेल्ड कर बनाया जाता है डेयरी टैंक धातु के गुणवत्ता के लिए अल्ट्रासोनिक परीक्षण किया जाता है अल्ट्रासोनिक परीक्षण में उपकरण में ध्वनि प्रसारक यत्रं (ट्रान्समीटर) एवं ध्वनि ग्राही यंत्र (रिसीवर) निश्चित स्थानों पर लगे रहते हैं। ध्वनि ऊर्जा की एक किरण प्रसारक यंत्र से निकलकर सामग्री में प्रवेश करती है फिर कुछ समय पश्चात् ध्वनि रिसीवर यंत्र तक आता है लेकिन अल्ट्रासोनिक परीक्षण एक बंद सतह पर प्रयोग किया जाता है लेकिन सामने वाला सतह चिकना होना चाहिए अधिकांश अल्ट्रासोनिक निरीक्षण 1-2मेगाहर्ट्ज (1-2MHz) के बीच आवृत्तियों पर की जाती है। अल्ट्रासोनिक जांच के लिए उच्च आवृत्ति के ध्वनि तरंगों की आवश्यकता होती है इसके लिए पीजोइलेक्ट्रिक ट्रांसड्यूसर प्रोब है जो पीजो इलेक्ट्रिक प्रभाव पैदा करता है ट्रांसड्यूसर (transducer) बेरियम टाइटेनेट के क्रिस्टल के दाबविद्युत् गुण का उपयोग कर पीजोइलेक्ट्रिक ट्रांसड्यूसर (क्रिस्टल) कंपित किया जाता है। इनका उपयोग यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करना होता है। इस परीक्षण को करने के लिए उच्च आवृत्ति के अल्ट्रासोनिक ध्वनि तरंगों का इस्तेमाल कर धातु के अंदरूनी भाग में दोषों को पराश्रव्य तरंगों द्वारा पता लगाया जाता है

## कोर्स

- डिप्लोमा इन डेयरी टेक्नोलॉजी, 3 साल
- बीटेक इन डेयरी टेकनोलजी 5$^{1}$/2 साल
- बीएससी इन डेयरी टेकनोलजी 4$^{1}$/2 साल
- एमएससी इन डेयरी टेक्नोलॉजी 2 साल
- एम टेक इन डेयरी टेक्नोलॉजी 2 साल
- डेयरी और खाद्य गुणवत्ता आश्वासन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
- डेयरी प्रौद्योगिकी में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
- एमबीए इन डेयरी प्रबंधन 2 साल

इसमें डेयरी विज्ञान के तकनीकी और मैनेजमेंट दोनों पहलुओं पर जोर दिया जाता है।

## अवसर

डेयरी टेक्नॉलॉजी में बीटेक करके आप डेयरी उद्योग/फार्मिंग के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। फिर इस ज्ञान और स्किल को जमीनी स्तर पर किसानों के बीच लागू करके आप देश के डेयरी सेक्टर में क्रांति ला सकते हैं। आम तौर पर एक डेयरी टेक्नॉलॉजिस्ट/इंजीनियर को यह सुनिश्चित करना होता है कि डेयरी फार्म में सही कार्य-प्रक्रिया का पालन किया जाए, जिससे दूध उत्पादन में भी वृद्धि हो और पशुओं की उत्पादकता तथा स्वास्थ्य में भी सुधार हो। डेयरी उद्योग का सुव्यवस्थित विकास डेयरी इंजीनियरों के लिए कॅरियर के बड़े अवसरों को प्रदान करता है। दुग्ध प्रसंस्करण व दुग्ध उत्पादों को बनाने के लिए सुयोग्य व अच्छे प्रशिक्षित कर्मियों की आवश्यकता होती है। वर्तमान समय में देश में 900 से अधिक डेयरी संयंत्र काम कर रहे हैं। डेयरी टैकनोलजी में बीटेक करने के बाद आप इस क्षेत्र के कुछ बेहद आकर्षक पदों पर जॉब पा सकते हैं। निजी क्षेत्र में प्रख्यात निजी कंपनियाँ -नेस्ले, ग्लैक्सोस्मिथक्लाइन, आईटीसी, लिमिटेड, एचयूएल, हेंज, वॉकहार्ट, रिलायंस, वरका, मदर डेयरी और अमूल आदि उद्योग हैं। विदेशी डेयरी संस्थानों में भी रोजगार के विभिन्न और पर्याप्त अवसर उपलब्ध हैं। ऑस्ट्रेलिया, डेनमार्क, संयुक्त अरब अमीरात, कनाडा और स्विट्जरलैंड जैसे देशों में डेयरी प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में काम करने के पर्याप्त अवसर हैं। विदेशों में डेयरी टेक्नॉलॉजी के स्नातकों के लिए 'डेयरी सलाहकार' के पद उपलब्ध हैं, जहाँ डेयरी उद्योग के क्षेत्र में काम करने का अनुभव बहुत आवश्यक है। हालांकि दुग्ध उपकरण आमतौर पर स्टेनलेस स्टील से बना है, जो आसानी से साफ और स्वच्छ हो दूध और डेयरी उत्पादों में सूक्ष्मजीवों के स्तर और प्रकार कच्चे माल की माइक्रोबियल गुणवत्ता पर निर्भर करता है रबड़ या अन्य गैर-धातु सामग्री से जुड़े कुछ हिस्सों में बैक्टीरिया को रासायनिक स्वच्छता से निष्क्रिय करना होता है। दूध और डेयरी उत्पादों में सूक्ष्मजीवों के स्तर और प्रकार कच्चे माल की माइक्रोबियल गुणवत्ता पर निर्भर करता है दुग्ध उपकरणों के सतह पर सूक्ष्मजीव मुख्य रूप से स्थानांतरित होते हैं दूध या तरल दूध उत्पाद और केवल न्यूनतम रासायनिक, और भौतिक परिवर्तन पाश्चराइजेशन की स्थिति प्रभावी रूप से नष्ट करने के लिए दुग्ध उपकरण डिजाइन की जाती है डेयरी उपकरणों की गुणवत्ता नियंत्रण एनडीटी परीक्षण से किया जाता है एनडीटी परीक्षण के लिए रेडियोग्राफिक परीक्षण और अल्ट्रासोनिक परीक्षण का ज्ञान डेयरी इंजीनियरों के लिए महत्वपूर्ण है।

## क्षेत्र

सरकारी क्षेत्र में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड संचालित विभिन्न अनुसंधान व अन्य संस्थानों में डेयरी वैज्ञानिक के पद पर कार्य करने हेतु भी बी. टेक (डेयरी प्रौद्योगिकी) की डिग्री आवश्यक है। डेयरी टैकनोलजी में बीटेक करके डेयरी टेक्नोलॉजिस्ट डेयरी इंजीनियर या खाद्य टेक्नॉलॉजिस्ट फार्म मैनेजर, डेयरी मैनेजर, आर एंड डी मैनेजर, असिस्टेंट क्वॉलिटी मैनेजर, बायोलॉजिकल साइंस टेक्निशियन, सेनिटेरियन, एग्रीकल्चरल स्पेशलिस्ट, असिस्टेंट प्लांट मैनेजर, एग्रीकल्चरल यूनिट सुपरवाइजर, डेयरी न्यूट्रिशनिस्ट, डेयरी क्वॉलिटी मैनेजर, हैड फार्म सर्विसेज आदि। भारत ही नहीं, आप डेयरी टेक्नॉलॉजी में बीटेक करके विश्व के अन्य प्रमुख दूध उत्पादक देशों में भी बेहतर करियर बना सकते हैं। इसके अलावा भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, भारतीय प्राणी-विज्ञान सर्वेक्षण, नई दिल्ली, पर्यावरण और वन मंत्रालयए में वैज्ञानिक/वैज्ञानिक अधिकारी/अनुसंधान अधिकारी/सहायक प्रोफेसर के रूप में काम कर सकते हैं। डेयरी टेक्नॉलॉजी का क्षेत्र मुख्य रूप से दूध के उत्पादन और प्रोसेसिंग से संबद्ध है। डेयरी टेक्नॉलॉजिस्ट डेयरी उत्पादों को तैयार करने की विभिन्न पद्धतियों व तकनीकों पर काम करते हैं और दूध की प्रोसेसिंग द्वारा विभिन्न उत्पादों के निर्माण, उनके विभिन्न बाजारों तक परिवहन, वितरण आदि की सारी व्यवस्था संभालते हैं। डेयरी टेक्नॉलॉजिस्ट विभिन्न डेयरी इंडस्ट्रीज/संस्थान में प्रबंधक, शिक्षाविद, डेयरी टेक्नोलॉजिस्ट, सूक्ष्म जीवविज्ञानी, पोषण विशेषज्ञ, डेयरी वैज्ञानिक, उद्योग पर्यवेक्षक डेयरी मेडिकल अधिकारी के पद पर अच्छा काम करते हैं।

## मुख्य संस्थान

- नेशनल डेयरी रिसर्च इंस्टीट्यूट, करनाल
- संजय गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ डेयरी टेक्नॉलॉजी लोहियानगर पटना

## पात्रता

बीटेक इन डेयरी टेक्नॉलॉजी करने के लिए जरूरी है कि आपने 12वीं न्यूनतम वांछित अंकों 50% के साथ उम्मीदवार ने विज्ञान विषयों जैसे कि भौतिकी, रसायन विज्ञान तथा गणित के साथ पास की हो। विज्ञान संकाय के विद्यार्थी 12वीं उत्तीर्ण होने के बाद डेयरी साइंस से संबंधित कोर्सेज में दाखिला ले सकते हैं।

## प्रवेश परीक्षा

बीटेक इन डेयरी टैकनोलजी कोर्स हेतु महत्वपूर्ण संस्थानों में दाखिले के लिए कॉमन एंट्रेंस टेस्ट परीक्षा में छात्रों को बैठना पड़ता है। इसके लिए वेटरिनरी काउंसिल ऑफ इंडिया द्वारा 'ऑल इंडिया कॉमन एंट्रेंस एग्जाम' का आयोजन किया जाता है। इसके अलावा डेयरी टेक्नॉलॉजी में यूजी प्रवेश परीक्षा उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय (एनएमयू) एकेएस विश्वविद्यालय कालीकट विश्वविद्यालय, नर्ससी मंजी इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज (एनएमआईएमएस), वीएनएमकेवी, केवीएएसयू बीटेक और बीवीएससी और एएच आदि प्रवेश परीक्षा डेयरी प्रौद्योगिकी में बीएससी/बीटेक कोर्स के लिए प्रवेश बीएससी/बीटेक में डेयरी प्रौद्योगिकी के लिए हैं।

## पारिश्रमिक

इस क्षेत्र में वेतनमान ऊंचाइयाँ छूता है। एक फ्रेश ग्रेजुएट जो ट्रेनी के रूप में काम करता है, वह 30000 रुपए से 70000 रुपए प्रतिमाह प्राप्त करता है। और यह काम व अनुभव के आधार पर निर्भर करता है। निजी क्षेत्र की तुलना में सरकारी क्षेत्र में वेतनमान कम होता है। एक डेयरी संयंत्र खोलकर अपना बिजनेस करके बेहतर कमाई कर सकता है और यह कमाई हजारों से लाखों रुपयों तक पहुंच जाती है। सरकारी संस्थान में नव-स्नातकों को आकर्षक वेतन पर नियुक्त किया जाता हैं और बहुत कुछ उसकी लोकप्रियता व अनुभव पर भी निर्भर करता हैं।

- बिहार कृषि विश्वविद्यालय सबोर, भागलपुर, बिहार
- उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद
- नर्सरी मंजी इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज (एनएमआईएमएस)
- नियोटिया कॉलेज, कोलकाता
- चंडीगढ़ विश्वविद्यालय
- बीआईटीएस, हैदराबाद
- अन्ना विश्वविद्यालय, चेन्नई
- कॉलेज ऑफ डेयरी साइंसेज एंड टेक्नॉलॉजी, मन्नाथी
- शेठ एमसी कॉलेज ऑफ डेयरी साइंस, आणंद एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, गुजरात
- डेयरी साइंस कॉलेज, बेंगलुरू
- आणन्द कृषि विश्वविद्यालय, आणन्द, गुजरात
- कृषि विश्वविद्यालय, उदयपुर
- विधान चन्द्र कृषि विश्वविद्यालय (बी.सी.के.वी.वी.), पश्चिम बंगाल
- बिरसा कृषि विश्वविद्यालय (बी.ए.यू.) रांची, झारखंड
- असम कृषि विश्वविद्यालय (ए.ए.यू.), जोरहाट, असम
- कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर ,शिवाजी नगर, पुणे
- केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय (सी.ए.यू.), इम्फाल, मणिपुर
- डॉ. पंजाब राव देशमुख कृषि विश्वविद्यालय (पी.के.वी.), अकोला, महाराष्ट्र
- कॉलेज ऑफ डेयरी टेक्नॉलॉजी, नागपुर

goswamisanjay80@gmail.com

*डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती का जन्म 11 जुलाई 1937 को ग्वालियर में हुआ। एम.एस-सी., पी.एच-डी., साहित्य विशारद और धर्म विशारद उपाधि प्राप्त डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती के 100 शोध पत्र, चार रिव्यू प्रकाशित हैं। आपके नेतृत्व में 12 पी.एच-डी. की गईं। विज्ञान लेखन के अतिरिक्त आपका हिन्दी साहित्य लेखन में महत्वपूर्ण योगदान है। विज्ञान और मानव, कथा द्रव्य की, प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन आपकी चर्चित कृतियां हैं। विश्वविद्यालयों के लिये आपने पाठ्य-पुस्तक लेखन किया। श्रेष्ठ विज्ञान शिक्षक, श्रेष्ठ विज्ञान पाठयपुस्तक लेखक, फीचर लेखक, शंकरदयाल शर्मा सृजन सम्मान, अनुसृजन सम्मान, तैलंग कुलम पुरस्कार और विभूति सम्मान से अलंकृत डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती ने इस पुस्तक में द्रव्य की अवस्थाओं का गहन अध्ययन किया है। रसायनशास्त्र द्रव्य का विज्ञान है। द्रव्य क्या है? यह पदार्थों में किस रूप में उपस्थित है? रसायन के क्षेत्र और महत्व को यदि आँका जाये तो हम कहेंगे रसायन विज्ञान उन द्रव्यों का अनुसंधान करता है जिसके द्वारा ब्रह्मांड बना है। पुस्तक में संवाद शैली के माध्यम से दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली वस्तुओं का रसायन विज्ञान भली-भाँति समझाया गया है।*

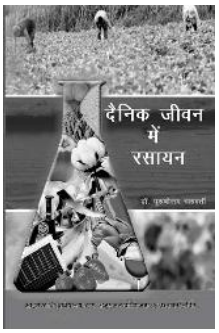


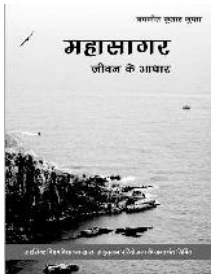


*नवनीत कुमार गुप्ता ने एम.एससी. विज्ञान संचार तक शिक्षा ग्रहण की और विज्ञान प्रसार से संबद्ध हुए। आपका जन्म 15 अगस्त 1982 को पचौर जिला रायगढ़ में हुआ। अब तक आपने जैव विविधता संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता संबंधी 10 पुस्तकें लिखीं। साथ ही 11 पुस्तकों का संपादन तथा अनेक लेखों का अनुवाद किया। राजीव गांधी ज्ञान-विज्ञान लेखन पुरस्कार, मेदनी पुरस्कार, राजभाषा पुरस्कार, श्रीतरूशनपाल पाठक स्मृति बाल विज्ञान पुरस्कार से सम्मानित नवनीत कुमार गुप्ता ने महासागरों की विशेषताओं की संक्षिप्त जानकारी के साथ पृथ्वी ग्रह को सुन्दर और जीवनदायी ग्रह बनाए रखने में इनकी पर प्रकाश डाला गया है। महासागरों के अनोखेपन से परिचित कराने के साथ ही महासागरों एवं सागरों को प्रदूषणरहित बनाए रखने की आवश्यकता पर ध्यान आकर्षित किया गया है।*

# कमज़ोर हो रहा है बहुरूपिया वायरस

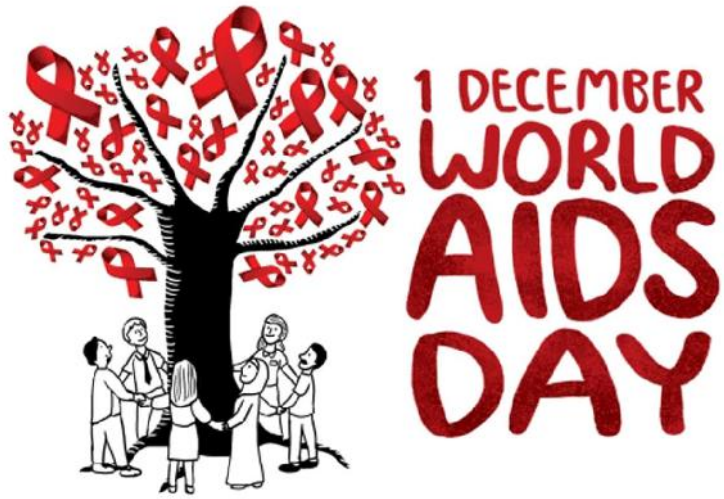


*जीवन जीने से जीवन की जद्दोजहद तक मनुष्य को विविध परिस्थितियों से गुज़रना और जूझना पड़ता है। कभी एड्स रूपी व्याधि दावन मनुष्य के शरीर की प्राकृतिक प्रतिरक्षा क्षमता को ग्रास बनाकर मनुष्य की रोगों से लड़ने की क्षमता ख़त्म कर मौत का इंतज़ार करने पर मजबूर कर देता है, तो कभी दिव्यांगता के चलते वह जीवन को जीतने का प्रयास करता है। कभी चाय की चुस्ती लेकर वह इत्मीनान के पल जीते हुए आसमान की ऊंचाइयों को छू जाना चाहता है।*

इरफान ह्यूमन

*डॉ. इरफान ह्यूमन विगत पच्चीस वर्षों से 'साइंस न्यूज एण्ड व्यूज़' मासिक विज्ञान पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रहे हैं। आप विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के माध्यम से देशभर में वैज्ञानिक जागरुकता के लिए प्रयासरत हैं। आपके एक हजार से अधिक लेख प्रकाशित हुए हैं, आकाशवाणी से अनेक विज्ञानवार्ताओं का प्रसारण हुआ है, विज्ञान धारावाहिक लेखन तथा विज्ञान डाक्यूमेंट्री फिल्मों के निर्माण में आपका बड़ा योगदान है। मुंबई में साइंस फिल्म फेस्टिवल आपकी फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। विज्ञान लेखन तथा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं तथा कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद हैं। वर्तमान में आप शाहजहाँपुर उ.प्र. में निवासरत हैं।*

## अभी सतर्क रहें

1 दिसम्बर को विश्व एड्स दिवस मनाया जाता है। एड्स (Acquired Immune Deficiency Syndrome) ह्यूमन इम्यूनोडेफिसियन्सी वायरस अर्थात एच.आई.वी संक्रमण के बाद की स्थिति है, जिसमें कोई इंसान अपने शरीर की प्राकृतिक प्रतिरक्षा (Immune) क्षमता को खो देता है। एड्स रोगी के शरीर में प्रतिरोधक क्षमता के क्षय होने से कोई भी आम संक्रमण, सर्दी जुकाम से ले कर क्षय रोग जैसे रोग तक सहजता से हो जाते हैं और उनका इलाज करना कठिन हो जाता हैं। एच. आई.वी. संक्रमण को एड्स की स्थिति तक पहुंचने में आठ से दस वर्ष या इससे भी अधिक समय लग सकता है। माना जाता है कि सबसे पहले इस रोग का विषाणु एच.आई.वी. अफ्रीका के ख़ास प्रजाति की बंदर में पाया गया और वहीं से ये पूरी दुनिया में फैला।

एड्स के संक्रमण के तीन मुख्य कारण हैं-असुरक्षित यौन संबंध, संक्रमित रक्त का आदान-प्रदान और माँ से शिशु में संक्रमण। भारत में एड्स से प्रभावित लोगों की बढ़ती संख्या के कई कारण हो सकते हैं, जैसे शिक्षा में यौन शिक्षण व जागरूकता बढ़ाने वाले पाठ्यक्रम का अभाव, आम जनता को एड्स के विषय में सही जानकारी न होना, एड्स तथा यौन रोगों के विषयों को कलंकित समझा जाना, कई धार्मिक संगठनों का गर्भ निरोधक के प्रयोग को अनुचित ठहराना आदि। राष्ट्रीय उपार्जित प्रतिरक्षी अपूर्णता सहलक्षण नियंत्रण कार्यक्रम और संयुक्त राष्ट्र संघ उपार्जित प्रतिरक्षी अपूर्णता सहलक्षण, दोनों ही यह मानते हैं कि भारत में 80 से 85 प्रतिशत संक्रमण असुरक्षित विषमलैंगिक यौन संबंधों से फैल रहा है। ज्ञात रहे वर्ष 1981 में एड्स की खोज से अब तक इससे लगभग 30 करोड़ लोग जान गंवा बैठे हैं। ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में हाल के एक अध्ययन के अनुसार, भारत में लगभग 14-16 लाख लोग एचआईवी एड्स से प्रभावित हैं।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में हुए एक वैज्ञानिक अध्ययन के मुताबिक हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली के अनुसार बदलाव आने के कारण एचआईवी वायरस कमजोर पड़ रहा है। अध्ययन के अनुसार अब एचआईवी संक्रमण से एड्स में तब्दील होने की प्रक्रिया सुस्त पड़ रही है और यह कम संक्रामक हुआ है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि वायरस में आ रहे बदलाव से इस महामारी को रोकने के प्रयास में मदद मिल सकती है।

कुछ वायरोलॉजिस्ट तो यहां तक मान रहे हैं कि इस वायरस में बदलाव आने की प्रक्रिया जारी रहने के कारण यह धीरे-धीरे लगभग हानि रहित हो जाने की संभावना है। एचआईवी का

विषाणु रूप बदलने में माहिर है। मानव शरीर के प्रतिरक्षा प्रणाली के अनुकूल खुद को ढालने और उसके असर से बच निकलने के लिए यह बड़ी तेजी और सहजता से खुद को बदलता है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर फिलिप गोल्डर कहते हैं, ''एचआईवी वायरस के सामने मुश्किलें लगातार बढ़ रही है। अब इसे जीवित रहने के लिए खुद में बदलाव लाना पड़ रहा है।''

'प्रसीडिंग ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज' के जांच परिणाम भी यही बताते हैं कि एंटीरेट्रोवायरल दवाइयों के असर के कारण एचआईवी कमजोर पड़ रहा है। प्रोफेसर गोल्डर का कहना है, ''20 साल पहले एचआईवी वायरस को एड्स का रूप लेने में 10 साल लगते था जबकि अब इसमें साढ़े बारह साल लग जाते हैं।'' हालांकि समूह ने चेतावनी भी दी है कि एचआईवी के कमजोर पड़ने के बावजूद यह अभी भी ख़तरनाक बना हुआ है।

न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसिन में प्रकाशित एक शोध से पता चला है कि चिकित्सकों ने एचआईवी के 12 मरीजों की प्रतिरोधक प्रणाली यानी उनकी बीमारियों से लड़ने की क्षमता बढ़ाने के लिए जीन थैरेपी का इस्तेमाल किया है और इसके नतीजे काफी उत्साहजनक हैं। ऐसे में इस बात संभावना बढ़ गई है कि मरीजों को एचआईवी के संक्रमण पर काबू पाने के लिए रोज़ाना दवा लेने की ज़रूरत न पड़े। जीन थैरेपी के दौरान मरीज की श्वेत रक्त कोशिकाओं (WBC's) को उनके शरीर से निकाल कर उनमें एचआईवी प्रतिरोधक क्षमता विकसित की गई और उन्हें दोबारा शरीर में डाल दिया गया।

अध्ययन में बताया गया है कि कुछ लोग बेहद दुर्लभ म्यूटेशन या कोशिकाओं में होने वाले परिवर्तन वाले होते हैं, जो उन्हें एचआईवी से बचाता है। म्यूटेशन के दौरान प्रतिरोधक प्रणाली के तहत आने वाले टी-सेल की संरचना में बदलाव आता है और वायरस भीतर दाखिल नहीं हो पाते हैं और अपनी संख्या को बढ़ा नहीं पाते हैं। टिमोथी रे ब्राउन ऐसे पहले व्यक्ति हैं, जो एचआईवी से मुकाबला करने में कामयाब रहे और उनकी सेहत में सुधार हुआ। ल्यूकिमिया ट्रीटमेंट के दौरान उनकी प्रतिरोधक प्रणाली काफ़ी कमजोर हो गई थी और फिर म्यूटेशन के जरिए किसी दूसरे व्यक्ति की मदद से वो इसे वापस पा सके।

अब पेंसिलवेनिया यूनीवर्सिटी में शोधकर्ता बीमारियों से लड़ने की क्षमता बढ़ाने के लिए मरीज की प्रतिरोधक क्षमता का इस्तेमाल कर रहे हैं। इसके तहत ख़ून से लाखों टी-सेल लिए गए और प्रयोगशाला में उनकी संख्या को अरबों तक बढ़ा दिया गया। चिकित्सकों ने टी-सेल के अंदर डीएनए का संपादन किया ताकि उनमें शील्डिंग म्यूटेशन का विकास किया जा सके, इसे सीसीआर5-डेल्टा-32 के नाम से भी जाना जाता है। इसके बाद क़रीब दर अरब कोशिकाओं को दोबारा शरीर में डाला गया, हालांकि करीब 20 प्रतिशत कोशिकाएं ही सफलता के साथ संशोधित हो सकीं। इसके बाद जब मरीज़ को चार सप्ताह तक दवा नहीं दी गई तो ये पाया गया कि शरीर में असंरक्षित टी-सेल की संख्या तो तेजी से घटी, लेकिन संशोधित टी-सेल टिकाऊ साबित हुईं और कई महीने बाद तक खून में बनी रहीं। पेंसिलवेनिया यूनीवर्सिटी में क्लीनिकल सेल एंड वैक्सीन प्रोडक्शन फैसिलिटी के निदेशक प्रोफेसल ब्रूस लेविन ने बीबीसी को बताया है कि यह पहली पीढ़ी का संपादन है जिसका प्रयोग अब से पहले कभी भी इंसानों पर नहीं किया गया था। उन्होंने बताया कि हम इस तकनीक का इस्तेमाल एचआईवी में कर सके हैं और नतीजों से पता चलता है कि ये सुरक्षित और व्यवहारिक है। इससे एचआईवी के इलाज में काफी मदद मिलेगी।

## दिव्यांगता-एक सकारात्मक दृष्टिकोण

3 दिसंबर को अन्तर्राष्ट्रीय दिव्यांग दिवस अथवा अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग दिवस (International Day of Persons with Disabilities) मनाया जाता है। वर्ष 1976 में संयुक्त राष्ट्र आम सभा के द्वारा ''विकलांगजनों के अंतर्राष्ट्रीय वर्ष'' के रुप में वर्ष 1981 को घोषित किया गया था और सयुंक्त राष्ट्र संघ ने 3 दिसंबर 1991 से प्रतिवर्ष अन्तरराष्ट्रीय विकलांग दिवस को मनाने की स्वीकृति प्रदान की थी।

दिव्यांग शरीर वाले लोग कुछ मायने में भले शारीरिक तौर पर कमजोर होते है लेकिन ज्ञान, मेधा और तार्किक शक्ति के लिहाज से अन्य व्यक्तियों से कम नही आंके जा सकते हैं। इससे एक संदेश मिलता है कि विकलांगता अभिशाप नहीं है क्योंकि शारीरिक अभावों को यदि प्रेरणा बना लिया जाये तो विकलांगता व्यक्तित्व विकास में सहायक हो सकती है, विश्व प्रसिद्ध महान वैज्ञानिक और बेस्टसेलर रही किताब 'अ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ टाइम' के लेखक स्टीफन हॉकिंग इसका उदाहरण थे, जिन्होंने शारीरिक अक्षमताओं को पीछे छोड़ते हुए यह साबित किया कि अगर इच्छा शक्ति हो तो व्यक्ति कुछ भी कर सकता है। हमेशा व्हील चेयर पर रहने वाले हॉकिंग किसी भी आम इंसान से इतर दिखते थे। कम्प्यूटर और विभिन्न उपकरणों के जरिए अपने शब्दों को व्यक्त कर उन्होंने भौतिकी के बहुत से सफल प्रयोग भी किए। यूनिवर्सिटी ऑफ कैम्ब्रिज में गणित और सैद्धांतिक भौतिकी के प्रोफेसर रहे स्टीफन हॉकिंग की गिनती आईंस्टीन के बाद सबसे बढ़े भौतकशास्त्रियों में होती है। अंग्रेजी में निःशक्त या विकलांग शब्द की व्याख्या की शुरुवात Handicapped या Disabled के रूप में की जाती थी। आगे चलकर 1980 के दशक में इस परिदृश्य में सकारात्मक बदलाव लाने का प्रयास किया गया। अमेरिका के Democratic National Committee ने विकलांगो के लिए Handicapped की जगह Differently शब्द के इस्तेमाल पर जोर दिया, जो अपने पूर्ववती शब्दों की तुलना में ज़्यादा स्वीकार्य हुआ। भारत में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने विकलांगो या निःशक्तो के लिए ''दिव्यांग'' शब्द का प्रयोग किये जाने पर बल दिया। आज आमजनों में भी इस शब्द का प्रचलन बढने लगा है तथा जनमानस के बीच इस शब्द की स्वीकार्यता स्थापित होने लगी है।

भारत का संविधान अपने सभी नागरिकों के लिए समानता, स्वतंत्रता, न्याय व गरिमा सुनिश्चित करता है और स्पष्ट रूप से यह विकलांग व्यक्तियों समेत एक संयुक्त समाज बनाने पर जोर डालता है।

हाल के वर्षों में विकलांगों के प्रति समाज का नज़रिया तेजी से बदला है। यह माना जाता है कि यदि विकलांग व्यक्तियों को समान अवसर तथा प्रभावी पुनर्वास की सुविधा मिले तो वे बेहतर गुणवत्तापूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं। जनगणना 2001 के मुताबिक, देश में 2.19 करोड़ व्यक्ति विकलांगता के शिकार हैं, जो कुल जनसंख्या का 2.13 प्रतिशत हिस्सा है। ७५ प्रतिशत विकलांग व्यक्ति ग्रामीण इलाकों में रहते हैं, तथा 49 प्रतिशत विकलांग व्यक्ति साक्षर हैं व 34 प्रतिशत रोजगार प्राप्त हैं। पूर्व के मेडिकल पुनर्वास पर जोर डालने की बजाए अब सामाजिक पुनर्वास पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। विकलांगों की बढ़ती योग्यता की पहचान की जा रही है, और उन्हें समाज की मुख्यधारा में शामिल किए जाने पर बल दिया जा रहा है।

आज देश में कई समाजसेवी संगठन विकलांगों के कल्याण के लिए सक्रिय हैं। नवाचारी विज्ञानरत्न लक्ष्मण प्रसाद ने विकलांगों के कल्याण के लिए काफी काम किया है। उन्होंने वर्ष 1995 में अलीगढ़ में आर्टिफिसियल लिम्ब्स सेंटर की स्थापना की है जो विकलांगों को मुफ्त कृत्रिम अंग और कैलीपर्स प्रदान करता है। इससे पूर्व वह 1957 में गोरखपुर में अंध विद्यालय के संस्थापक प्रिन्सिपल रहे। 1959 में वह केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के अधीन दृश्टिहीनों के लिए प्रथम प्लेसमेंट ऑफिसर नियुक्त हुए। 1960 में जब वह मात्र 29 वर्ष के थे तो उन्होंने मनीला फिलिपींस में विकलागों के व्यावसायिक पुनर्वास के लिए आयोजित प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन संगोष्ठी मे भारत सरकार का प्रतिनिधित्व किया। उनकी पुस्तक 'रिहेबिलिटेशन ऑफ द फिज़िकली हैण्डीकैप्ड' विकलांगों के प्रति उनकी गहन सहानुभूति और चिन्ता अभिव्यक्त करती है। यही नहीं उन्होंने विकलांगों के जीवन को सहज और सरल बनाने के लिए स्पेशल व्हाइट स्टिक और ऑटोमेटिक ऑडियो-विज़ुअल सिग्नल युक्त डिवाइस आदि विकसित की हैं।

## मिट्टी का मोल जाने

5 दिसम्बर को संयुक्त राष्ट्र द्वारा हर विश्व मृदा दिवस (World Soil Day) मनाया जाता है। इस दिवस को मनाने की शुरूआत 20 दिसंबर, 2013 से की गई थी। पृथ्वी ऊपरी सतह पर मोटे, मध्यम और बारीक कार्बनिक तथा अकार्बनिक मिश्रित कणों को मृदा या मिट्टी कहते हैं। सभी मिट्टियों की उत्पत्ति चट्टान से हुई है। जहाँ प्रकृति ने मिट्टी में अधिक हेर-फेर नहीं किया और जलवायु का प्रभाव अधिक नहीं पड़ा, वहाँ यह संभव है कि हम नीचे की चट्टानों से ऊपर की मिट्टी का संबंध क्रमबद्ध रूप से स्थापित कर सकें। यद्यपि ऊपर की सतह की मिट्टी का रंग-रूप नीचे की चट्टान से बिलकुल भिन्न है, फिर भी दोनों में रासायनिक संबंध रहता है और यदि प्राकृतिक क्रिया द्वारा अर्थात् जल द्वारा बहाकर, अथवा वायु द्वारा उड़ाकर, दूसरे स्थल से मिट्टी नहीं लाई गई है, तब यह संबंध पूर्ण रूप से स्थापित किया जा सकता है।

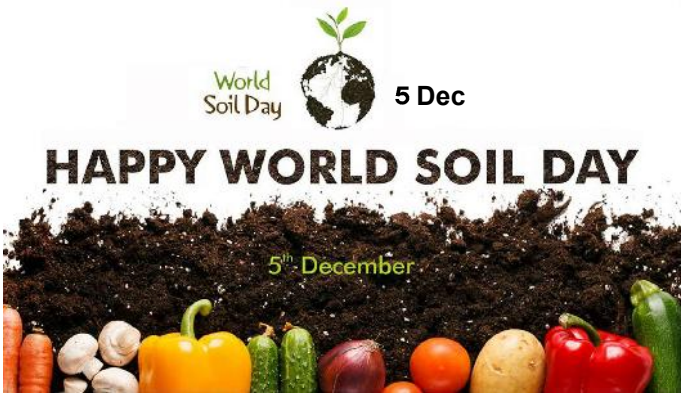


मिट्टी पर आदि काल से कृषि होती आ रही है तथा मनुष्य फसल पैदा करता रहा है। कोई-कोई मिट्टी दूसरी जगह की चट्टानों से बनकर प्राकृतिक कारणों से आ जाती है। ऐसे स्थानों में यह सम्भावना नहीं है कि ऊपर की मिट्टी का भौतिक तथा रासायनिक सम्बन्ध नीचे के संचय से स्थापित किया जाय, पर यह निश्चित है कि मिट्टी की उत्पत्ति चट्टानों से हुई है। खेतों की मिट्टी में चट्टानों के खनिजों के साथ-साथ, पेड़ पौधों के सड़ने से, कार्बनिक पदार्थ भी पाए जाते हैं। सूक्ष्मदर्शी द्वारा तथा रासायनिक विश्लेषण से पता चलता है कि चट्टानों की छीजन क्रिया प्रकृति में पाए जाने वाले रासायनिक प्रभाव से धीरे-धीरे होती है। चट्टानों के रासायनिक अवयव बदल जाते हैं और मिट्टी की रूपरेखा बिलकुल भिन्न प्रतीत होती है। यदि चट्टान का छीजना ही मिट्टी के बनने में एक प्रधान क्रिया होती तो हम आज खेतों की मिट्टी को पौधों के पनपाने के लिये अनुकूल नहीं पाते। मिट्टी बनना कोई एक-दो वर्ष का फल नहीं है, बल्कि हजारों-लाखों वर्ष की क्रियाओं का फल है। जीवजंतु तथा उनसे संबंध रखनेवाले पदार्थो के, जैसे पेड़-पौधों की सड़ी हुई वस्तुओं और सड़े हुए जीव जंतुओं के प्रभाव से कलिल अवस्था में प्राप्त चट्टानों के छोटे-छोटे कणों पर प्रतिक्रिया होती रहती है और मिट्टी का रंग रूप बदल जाता है। प्राकृतिक क्रियाओं द्वारा चट्टानों का छोटे-छोटे कणों में परिवर्तन होने से मिट्टी के बनने में जो सहायता होती है, उस क्रिया को अपक्षय (west-hering) कहते हैं। यह क्रिया महत्वपूर्ण है और इसके कारण ही हम पृथ्वी पर मिट्टी को कृषि के अनुकूल पाते हैं। इस क्रिया में जल, हवा में स्थित ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड, जीवाणुओं तथा अन्य अम्लीय रासायनिक द्रव्यों से बहुत सहायता मिलती है।

मध्य अस्सी के दशक से नब्बे के दशक की अवधि के दौरान, सुदूर संवेदन उपग्रहों की दूसरी पीढ़ी अर्थात, आईआरएस उपग्रहों को उच्च स्थानिक और वर्णक्रमीय विभेदनों के साथ प्रक्षेपित किया गया था, जो मिट्टी का 1: 50000 पैमाने पर मानचित्र तैयार करने में सक्षम था। आईआरएस उपग्रह -1ए/1बी लिस-11 के साथ अध्ययन ने मिट्टी संसाधन अध्ययन में दूरदराज के संवेदन अनुप्रयोगों की तेजी से विकास और व्यापक स्वीकार्यता के दौर निर्धारित किए। अंतरिक्ष विभाग की प्रमुख परियोजना सतत विकास के लिए एकीकृत मिशन परियोजना के अंतर्गत भारत में विभिन्न राज्यों जैसे आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश हरियाणा के लगभग 83.3 मि. हैक्टर क्षेत्र को आवृत्त करते हुए 1:50000 पैमाने पर मृदा संसाधनों का मानचित्रण किया गया। मृदा मानचित्र तैयार करने के बाद, भूमि संसाधन वर्गीकरण, भू-संसाधन योजना के लिए प्रमुख फसलों को भूमि सिंचाई मूल्यांकन और उपयुक्तता के लिए मिट्टी का मूल्यांकन किया गया।

एनआरएसए (1 99 7, 1 99 7) ने 1:50 के पैमाने पर आईआरएस-लिस-द्वितीय/तृतीय संवेदक से सुदूर संवेदन आंकड़ों का इस्तेमाल करते हुए आंध्र प्रदेश के कृष्णा-पेन्नर लिंक नहर के कमांड क्षेत्र में तथा श्री राम सागर परियोजना (एसआरएसपी) चरण-11 और भूमि

सिंचाई मूल्यांकन किया था। कमांड क्षेत्रों की मिट्टी का मानचित्रण उनकी उपयुक्तता के लिए किया गया और एफएओ दृष्टिकोण का पालन करके ज्वार, मिर्च, मक्का, मूंगफली, कपास, दालों, धान आदि जैसे फसलों की उपयुक्तता के लिए मूल्यांकन किया गया। सिंचाई के लिए भूमि उपयुक्तता का मूल्यांकन भी किया गया था

नब्बे के दशक के मध्य से आईआरएस -1 सी/1 डी उपग्रहों से 5.8 मीटर (पैन संवेदक) की उपलब्धता और 23.5 मीटर के स्थानिक विभेदन आंकड़ों (लिस-3 संवेदक) के साथ 1:25,000 और 1:12,500 पैमाने पर मिट्टी के नक्शे तैयार करने के लिए पैन संयोजित लिस-111 आंकड़ों से अध्ययन किया गया। आन्ध्र प्रदेश सरकार के कृषि विभाग के लिए आन्ध्र प्रदेश के संगारेड्डी एवं कर्नूल जिले के एक भाग के लिएय और राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना (एनएटीपी) के अंतर्गत दादर एवं नगर हवेली संघ राज्य क्षेत्र का 1:12,500 पैमाने पर मृदा मानचित्रण किया गया। इस पैमाने पर, मिट्टी की मृदा शृंखला के स्तर पर उसके चरणों के साथ मिट्टी का मानचित्रण किया जा सकता है।

इस दिवस को मनाने का उद्देश्य किसानों और आम लोगों को मिट्टी की महत्ता के बारे में जागरूक करना है। विश्व के बहुत से भागों में उपजाऊ मिट्टी बंजर और किसानो द्वारा ज़्यादा रासायनिक खादों और कीटनाशकों का इस्तेमाल करने से मिट्टी के जैविक गुणों में कमी आने के कारण इसकी उपजाऊ क्षमता में गिरावट आ रही है और यह प्रदूषण का भी शिकार हो रही है। इस तारतम्य किसानो और आम जनता को इसकी सुरक्षा के लिए जागरूक करने की ज़रूरत है।

## हवाई परिवहन

7 दिसम्बर को अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक विमानन (International Civil Aviation Day) दिवस मनाया जाता है। वर्ष 1944 में शिकागो में इसी दिन अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संधि पर हस्ताक्षर किये गये थे। संयुक्त राष्ट्र की आम सभा में इस प्रस्ताव के माध्यम से संगठन की पचासवीं वर्षगांठ मनाई गई। वर्ष 1996 में संयुक्त राष्ट्र की सभा में 7 दिसम्बर को नागरिक विमानन दिवस के रूप मे घोषित किया गया क्योंकि इसी दिन वर्ष 1944 में शिकागो में अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संधि पर हस्ताक्षर किये गये थे।

यदि वैज्ञानिक इतिहास पर नज़र डालें तो पाएंगे कि वर्ष 1903 में राइट बंधुओं ने सबसे पहले ऐसी यात्रा की थी जिसमें वायुयान इंजनयुक्त और हवा से भारी था। राइट बंधु (Wright brothers), ऑरविल (Orville Wright) और विलबर (Wilbur Wright), दो अमेरीकन भाई थे जिन्हें हवाई जहाज़ का आविष्कारक माना जाता है। इन दोनों ने 17 दिसंबर, 1903 को संसार की सबसे पहली सफल मानवीय हवाई उड़ान भरी जिसमें हवा से भारी विमान को नियंत्रित रूप से निर्धारित समय तक

संचालित किया गया। इसके बाद के दो वर्षों में अनेक प्रयोगों के बाद इन्होंने विश्व का प्रथम उपयोगी दृढ़-पक्षी विमान तैयार किया। 1900 से 1903 तक इन्होंने ग्लाइडरों पर बहुत प्रयोग किये जिससे इनका पायलट कौशल विकसित हुआ। इनके साइकिल की दुकान के कर्मचारी चार्ली टेलर ने भी इनके साथ बहुत काम किया और इनके पहले यान का इंजन बनाया। जहाँ अन्य आविष्कारक इंजन की शक्ति बढ़ाने पर लगे रहे, वहीं राइट बंधुओं ने आरंभ से ही नियंत्रण का सूत्र खोजने पर अपना ध्यान लगाया। इन्होंने वायु-सुरंग में बहुत से प्रयोग किए और सावधानी से जानकारी एकत्रित की, जिसका प्रयोग कर इन्होंने पहले से कहीं अधिक प्रभावशाली पंख और प्रोपेलर खोजे। इनके पेटेंट में दावा किया गया है कि इन्होंने वायुगतिकीय नियंत्रण की नई प्रणाली विकसित की है जो विमान की सतहों में बदलाव करती है। हालांकि इन्हें प्रायोगिक विमान बनाने और उड़ाने वाले पहले आविष्कारक नहीं कहा जा सकता, लेकिन इन्होंने हवाई जहाज़ को नियंत्रित करने की जो विधियाँ खोजीं, उनके बिना आज का वायुयान संभव नहीं था।

अनेक अन्य आविष्कारकों ने भी हवाई जहाज़ के आविष्कार का दावा किया है, लेकिन इसमें कोई दो राय नहीं कि राइट बंधुओं की सबसे बड़ी उपलब्धि थी तीन-ध्रुवीय नियंत्रण का आविष्कार, जिसकी सहायता से ही पायलट विमान को संतुलित रख सकता है और दिशा-परिवर्तन कर सकता है। नियंत्रण का यह तरीका सभी विमानों के लिये मानक बन गया और आज भी सब तरह के दृढ़-पक्षी विमानों के लिए यही तरीका उपयुक्त होता है।

विमान संचालन के बाद धीरे-धीरे विभिन्न देशों के बीच वायुमार्गों का जाल घना हुआ तथा कई देशों ने अपने उपनिवेशों तक के लिए लंबे वायुमार्ग स्थापित किए। इसके बाद परिवहन की क्षमता बढ़ाई गई। गति में तीव्रता आई और यात्राओं का विस्तार लंबा होने लगा। इंजन चालित वायुयानों के बदले टरबाइन चालित, फिर जेट चालित वायुयान बने। अक्टूबर, 1958 में संयुक्त राज्य, अमेरीका, से ब्रिटेन और फ्रांस तक, अंध महासागर को पार करके जाने वाली पहली जेट सर्विस का उद्घाटन हुआ और व्यावसायिक उड्डयन ने जेट युग में प्रवेश कर लिया।

भारत में वर्ष 1919 में पूरे देश में डाक पहुँचाने का पूरा उत्तरदायित्व एक यातायात कंपनी को सौंप देने का निश्चय किया, परंतु कुछ कार्य न हो सका। एक साल बाद हवाई अड्डे स्थापित करने और बंबई-कलकत्ता तथा कलकत्ता-रंगून की यात्राओं के लिए सुविधाएँ देने की ओर सरकार की प्रवृत्ति हुई। एक भारतीय वायुमंडली (एयर बोर्ड) स्थापित हुई, बाद के कुछ वर्षों में ब्रिटेन, फ्रांस और हालैंड ने भारत के बाहर सुदूर-पूर्वी उपनिवेशों में हवाई चर्याएँ स्थापित कीं। इन प्रगतियों ने भारत सरकार को भी सोचने को बाध्य किया और भारत में सहायक चर्याएँ चलाने की आवश्यकता का उसने अनुभव किया। परिणामतः भारतीय व्यापारियों से बातचीत आरंभ की गई। इन वार्ताओं के फलस्वरूप टाटा एयरलाइन और इंडियन नैशनल एयरवेज की चर्याओं का विकास हुआ। इन कंपनियों ने डाक ढोने के लिए एक इंजन वाले हल्के वायुयानों द्वारा कार्यसंचालन आरंभ किया। भारत सरकार द्वारा वर्ष 1938 में बनाई गई राजकीय हवाई डाक योजना से इस उद्योग में विस्तार को बढ़ावा मिला। वर्ष 1953 में इंडियन एयरलाइंस कॉरपोरेशन स्थापित हो गया, जिसके अंतर्गत इंडियन एयरलाइंस तथा एयर इंडिया नामक दो

हवाई सेवाएँ चालू हुई। इंडियन एयरलाइंस देश के अंदर तथा समीपस्थ देश बर्मा, नेपाल एवं श्रीलंका के लिए हवाई सेवाएँ उपलब्ध कराती है और एयर इंडिया विश्व के 24 देशों के लिए जेट वायुयानों द्वारा हवाई सेवाएँ सुलभ कराईं। इंडियन एयरलांइस की उड़ाने भारत में 64 स्थानों और विदेशों में 16 स्थानों पर जाती हैं और प्रतिदिन 35,000 सीटें उपलब्ध कराता है और इस तरह यह भारत की सबसे बड़ी विमान सेवा कंपनी है।

## एक चाय की प्याली हो

15 दिसम्बर अंतर्राष्ट्रीय चाय दिवस (International Tea Day) मनाया जाता है। इस दिवस की शुरूआत वर्ष 2015 को नई दिल्ली से हुई। इसके एक वर्ष बाद यह दिवस श्रीलंका में मनाया गया और आज यह दिवस पूरे विश्व में मनाया जाता है। यह दिवस भारत सहित ग्यारह चाय उत्पादक देशों जैसे श्रीलंका, तंज़ानिया, युगांडा, विएतनाम, मलेशिया, मालावी, बांग्लादेश, इंडोनेशिया, केन्या और नेपाल के चाय उद्योग, मुख्यतः छोटे उत्पादकों और श्रमिकों के लिए एक संयुक्त प्लेटफॉर्म प्रदान करता है। इस दिवस का उद्देश्य है चाय बाग़ान से लेकर चाय की कम्पनियों तक में काम करने वाले श्रमिकों की स्थिति की ओर ध्यान आकृष्ट करना है। दुनियाभर में चाय का सेवन सबसे आम, चर्चित और पसंदीदा माना जाता है। चाहे भारत हो या कोई और देश, चाय को मेहमान नवाजी में सबसे ज्यादा शामिल किया जाता है। एक तरह से देखा जाए तो चाय की मौजूदगी ने लोगों की जीवनशैली को काफी हद तक प्रभावित किया है। हालांकि, कई तरह की महत्वपूर्ण तत्वों के प्रयोग से बनाई जाने वाली चाय आपकी सेहत को कई तरह के लाभ प्रदान करती है। चाय के इतिहास की बात करें तो पाएंगे कि ईसा पूर्व 2737 की घटना चाय का इतिहास गढ़ने के लिए महत्वपूर्ण घटना घटित हुई। एक दिन चीन के सम्राट शैन नुंग रखे गर्म पानी के प्याले में, कुछ सूखी पत्तियाँ आकर गिरीं जिनसे पानी में रंग आया और जब उन्होंने उसकी चुस्की ली तो उन्हें उसका स्वाद बहुत पसंद आया। बस यहीं से शुरू हो गया चाय का सफ़र। सन् 350 में चाय पीने की परंपरा का पहला उल्लेख मिलता है। वर्ष 1610 में डच व्यापारी चीन से चाय यूरोप ले गए और धीरे-धीरे ये समूची दुनिया का प्रिय पेय बन गया। भारत में सबसे पहले वर्ष 1815 में कुछ अंग्रेज यात्रियों का ध्यान असम में उगने वाली चाय की झाड़ियों पर गया जिससे स्थानीय कबाइली लोग एक पेय बनाकर पीते थे।

भारत के गवर्नर जनरल लॉर्ड बैंटिक ने वर्ष 1834 में चाय की परंपरा भारत में शुरू करने और उसका उत्पादन करने की संभावना तलाश करने के लिए एक समिति का गठन किया। इसके बाद वर्ष 1835 में असम में चाय के बाग लगाए गए। सुबह से शाम तक ताजगी देने और थकान मिटाने के लिए पूरी दुनिया में पसंद की जाने वाली चाय हृदय रोगों, कैंसर और मधुमेह में फायदेमंद और वजन तथा कोलेस्टेरोल घटाने और मानसिक सजगता बढ़ाने में उपयोगी है। आज चाय के ग्रीन टी और हर्बल टी जैसे अनेक रूप लोकप्रिय हो रहे हैं।

चीन की पीकिंग यूनिवर्सिटी में चाय पर एक शोध किया गया है, जिसे फूड क्वालिटी एंड प्रीफरेंस में प्रकाशित किया गया है, के अनुसार चाय के सेवन से लोगों की मानसिक एकाग्रता और रचनात्मकता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस शोध में 23 साल की उम्र के पचास विद्यार्थियों को शामिल किया गया था। शोधकर्ताओं के मुताबिक चाय का सेवन करने के कुछ ही समय बाद सकारात्मक प्रभाव इन विद्यार्थियों पर दिखाई देने लगे। शोध में शामिल विद्यार्थियों में आधे विद्यार्थियों को गर्म पानी जबकि और बाकी लोगों को ब्लैक टी का सेवन करने को कहा गया। इसके परिणामों में चाय पीने वाले विद्यार्थियों का मानसिक स्तर दूसरे विद्यार्थियों सो आगे रहा। फूड क्वालिटी एंड प्रीफरेंस में प्रकाशित किया गया है। शोध के प्रकाशित परिणामों की रिपोर्ट में बताया गया है कि यह शोध लोगों की रचनात्मकता पर चाय पीने के पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने के लिए किया गया था। इससे लोगों के खान-पान और उनकी संज्ञानात्मक क्षमता के बीच संबंधों को समझने में मदद मिलती है।

पाया गया है कि चाय पीने से कई तरह के कैंसर का ख़तरा कम होता है और ब्लड-प्रेशर भी ठीक रहता है। यही नहीं चाय पीने वालों को पारकिंसन रोग होने का ख़तरा भी कम रहता है। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति में अपने शरीर के अंगों पर नियंत्रण करने की क्षमता धीरे-धीरे कम होती जाती है। वैज्ञानिकों ने पहले ही एक ऐसे तत्व की पहचान कर ली है जो हमें कई बीमारियों से बचाती है। चाय में, विशेषतः हरी चाय में कुछ ऐसे ऑक्सीडेंट्स होते हैं जो रोग निरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। पारकिंसन डिज़ीज़ सोसइटी के प्रवक्ता ने माना है कि चाय से फायदा हो सकता है। उनका कहना है कि अधिक जानकारी के लिए रोगियों का गहराई से अध्ययन किया जाना जरूरी है। चाय में पॉलीफेनॉल नाम का एक ऑक्सीडेंट पाया गया है जो लोगों को दिल की बीमारियों से भी बचाता है। वैज्ञानिक कुछ समय से चूहों पर किए गए शोध के आधार पर कह रहे थे कि चाय से पारकिंसन रोग से लड़ने में सहायता मिलती है।

research.rog@rediffmail.com+

## फ्रेशर्स पार्टी का आयोजन

मौका था रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में इंजीनियरिंग विभाग में आयोजित फ्रेशर पार्टी ''हार्मोनी 2018'' का आयोजन हुआ। इस अवसर पर विपुल सेलम ने गिटार के साथ ओठो से छू लो तुम.. गीत गाया। कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए छात्रों ने भारतीय-पाश्चात्य संगीत की प्रस्तुति दी। मिस्टर फ्रेशर चारु बीई सिविल, मिस फ्रेशर आयुषी बीई सीएस और मिस्टर ईव उज्जवल डिप्लोमा सिविल, मिस ईव सिमरन ईएक्स का खिताब दिया गया। इस मौके पर डॉ. संजीव गुप्ता ने नए छात्रों का स्वागत किया और कहा कि आप सभी सद्भाव के साथ रहें और अनुशासन का पालन करें। अंत में उन्होंने कहा कि आपका कॉम्पिटीशन आज इस स्टेज से प्रारंभ होकर उज्ज्वल भविष्य बनाने तक जारी रहेगा। डॉ. नीतू पालीवाल, कल्चरल कोआर्डिनेटर, डॉ.रितु कुमारन, डीएसडब्ल्यू ने कार्यक्रम में समन्वयक की भूमिका निभाई। द्वितीय वर्ष के छात्र शशांक, राबिन, दीप्ति और प्रथम वर्ष के छात्र सुब्रत ने मंच का संचालन किया।

## मतदाता जागरुकता कार्यक्रम

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में निर्वाचन आयोग के निर्देशानुसार सिस्टमेटिक वोटर्स एजुकेशन एण्ड इलेक्ट्राल पार्टिसिपेशन (स्वीप) गतिविधियों के अंतर्गत मतदाता जागरुकता के लिये विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है। इसी क्रम में विश्वविद्यालय के राष्ट्रीय सेवा योजना के स्वयं सेवकों ने मतदाता जागरुकता के लिये विभिन्न वृत्त चित्रों को प्रदर्शित कर शत्-प्रतिशत् मतदान के लिये प्रेरित किया। इस दौरान विश्वविद्यालय की राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई की कार्यक्रम अधिकारी डॉ. रेखा गुप्ता, डॉ. किरण मिश्रा, जनसंपर्क अधिकारी समीर चौधरी, विजय प्रताप सिंह, आईटी अधिकारी रमेश विश्वकर्मा, उपेन्द्र पटने और बड़ी संख्या में विद्यार्थी उपस्थित थे।

## बच्चों के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को समझना शिक्षकों के लिये जरुरी: प्रो. ए.के. ग्वाल

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में 'स्टेजेस आफ डेवलपमेंट एण्ड इट्स एजुकेशनल इम्प्लीकेशन' विषय पर एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। यह संगोष्ठी विश्वविद्यालय में शिक्षा संकाय के बी.एड विभाग एवं बरकतउल्ला विश्वविद्यालय द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित की गई। संगोष्ठी के शुभारंभ में बरकतउल्ला विश्वविद्यालय के बी.एड. विभाग के विभागाध्यक्ष श्री हेमंत खंडाई द्वारा संगोष्ठी के उद्देश्यों की विस्तृत चर्चा की गई। बरकतउल्ला विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान विभाग के डॉ. के. एन. त्रिपाठी ने अपने उद्बोधन में बताया कि बालक के वृद्धि एवं विकास में वातावरण एवं वंशानुक्रम का किस तरह प्रभाव पड़ता है। सेवा निवृत्त प्रो. एन.के. कौशिक द्वारा बच्चों के विकास से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारियां दी गईं। रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के. ग्वाल ने संगोष्ठी को संबोधित करते हुए कहा कि बच्चों के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को समझना शिक्षक के लिये बहुत आवश्यक है। यह एक नया विषय है और इस पर चर्चा होना जरूरी है। विश्वविद्यालय समय-समय पर समसामायिक विषयों पर इस तरह के संगोष्ठियों का आयोजन करता है। इस अवसर पर आयोजित शोध पत्रों की प्रस्तुति और सामूहिक चर्चा के दौरान विभिन्न संस्थानों से आये हुए शिक्षाविद् और शोधार्थियों ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की शिक्षा संकाय की डीन डॉ. रेखा गुप्ता ने आभार प्रदर्शन करते हुए कहा कि इस तरह की संगोष्ठियां बच्चों के विकास के दौरान रखी जाने वाली सावधानियों के लिये आवश्यक है।

## रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय भोपाल और साइबर इन्फ्रास्ट्रक्चर के मध्य एमओयू

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय (आरएनटीयू) मध्य भारत में सबसे तेजी से बढ़ता तकनीकी विश्वविद्यालय है। हाल ही में रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय और इंदौर स्थित साइबर इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रा.लि. (सीआईएस) के साथ एमओयू किया गया है। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार डॉ. विजय सिंह और सुयश सबनानी, एचआर साइबर इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रा.लि. ने एमओयू पर हस्ताक्षर किये। इस समझौता ज्ञापन से छात्रों को उद्योग आधारित कौशल और तकनीक से संबंधित प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा। इसके अलावा यूनिवर्सिटी के सेंटर ऑफ एक्सिलेंस (सीओई) इस समझौते के बाद साइबर इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रा. लि. के साथ मिलकर बी.ई. कम्प्यूटर साइंस, आईटी, बैचलर ऑफ कम्प्यूटर एप्लीकेशन और बी.एस.सी. आई.टी. के छात्रों को उद्योगों के अनुरूप तैयार करेगा।

## करन परियार सम्मानित

''जो भी आप कर रहे हैं उसे दिल से कीजिये, जिद और जुनून ही आपको सफल बनायेगी''। यह बात कलर्स टीवी के बहुचर्चित शो 'डांस दिवाने' के सेमिफाइनलिस्ट रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के छात्र करन परियार ने विश्वविद्यालय परिसर में कही। करन परियार रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में बी.काम का छात्र है। विश्वविद्यालय ने अपने छात्र की इस उपलब्धि पर ग्यारह हजार रुपए सम्मान राशि का चैक और अवार्ड प्रदान किया साथ ही बी.काम की फीस न लेने का निर्णय लिया।

शुरुआती दौर में प्रेम रतन धन के पायो के गाने पर रोबोटिकस मूव्स की परफार्मेंस को जज अभिनेत्री माधुरी दीक्षित और सुप्रसिद्ध अभिनेता सलमान खान व अनिल कपूर द्वारा सराहा गया जो कि अब मेरा सिग्नेचर स्टाइल भी बन चुका है। इस मुकाम तक पहुंचने के लिये करन ने विश्वविद्यालय के सहयोग व विश्वविद्यालय के सहायक कुलसचिव ऋत्विक चौबे और स्पोर्टस आफिसर सतीश अहिरवार के मार्गदर्शन का विशेषरूप से उल्लेख किया। विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के.ग्वाल ने करन को शुभकामनाएं देते हुए कहा कि हमें अपने छात्र पर गर्व है। विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ.विजय सिंह ने कहा कि विश्वविद्यालय हमारे एचीवर्स को हमेशा प्रोत्साहित कर रहा है। करन भी हमारे एचीवर्स की लिस्ट में शामिल हो चुका है। निश्चित ही उनकी इस उपलब्धि से विश्वविद्यालय गौरवान्वित हुआ है। इस अवसर पर करन की इस यात्रा का वीडियो भी दिखाया गया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. संगीता जौहरी ने किया। विश्वविद्यालय के डीन एकेडमिक डॉ. संजीव गुप्ता, वाणिज्य विभाग की डीन डॉ. दीप्ति महेश्वरी, डॉ. कौस्तुभ जैन व बड़ी संख्या में फैकल्टी और विद्यार्थी उपस्थित थे।

## सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर

डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय में एक दिवसीय अतिथि व्याख्यान का आयोजन किया गया। जिसमें गुरु घासीदास केंद्रीय विश्वविद्यालय की प्रो. मनीषा दुबे ने अतिथि के रूप में उपस्थित थी। उन्होंने वर्तमान परिदृश्य में विभिन्न आर्थिक सिद्धांत की प्रासंगिकता विषय पर व्याख्यान दिया। इस अवसर पर सभी विभागों के विभागाध्यक्ष, प्राध्यापक, शोधार्थी और बड़ी संख्या में छात्र-छात्राएं उपस्थित थे।

डॉ.सी.वी. रामन विश्वविद्यालय में सात दिवसीय योग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित छत्तीसगढ़ योग के अध्यक्ष संजय अग्रवाल जी विशेष रुप से उपस्थित थे। समापन अवसर पर संजय अग्रवाल ने सभी प्रशिक्षण प्राप्त विद्यार्थियों को प्रमाण पत्र वितरित किया और जीवन में योग के महत्व को बताया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रोफेसर आर.पी.दुबे, कुलसचिव गौरव शुक्ला सहित सभी विभागों के विभाग अध्यक्ष प्राध्यापक और अधिकारी कर्मचारी उपस्थित थे।

## ईस्ट जोन इंटर यूनिवर्सिटी कबड्डी प्रतियोगिता

डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय में ऑल इंडिया यूनिवर्सिटी एसोसिएशन (एआईयू) के ईस्ट जोन इंटर यूनिवर्सिटी कबड्डी प्रतियोगिता का आगाज हो गया। प्रतियोगिता 29 अक्टूबर से 1 नवंबर तक आयोजित की जा रही है। इसमें देश के 9 राज्यों के 48 विश्वविद्यालायों की कबड्डी टीमें भाग लें रही। प्रतियोगिता के पहले दिन अटल बिहारी बाजपेई विवि, बिलासपुर के कुलपति प्रो.जी.डी.शर्मा मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने प्रतियोगिता प्रारंभ करने की विधिवत् घोषणा की। इस अवसर पर सीवीआरयू के विद्यार्थियों ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति दी। शुभारंभ अवसर पर विवि के कुलपति प्रो.आर.पी.दुबे, कुलसचिव गौरव शुक्ला, सम कुलपति प्रो.पी.के.नायक, प्राचार्य प्रो.मनीष उपाध्याय सहित बड़ी संख्या में खिलाड़ी मौजूद रहे।